

પૂ૦ બ૦ શ્રી ચુનીલાલજી દેસાઈ
(राजकोट वाले)



* श्री परमात्मने नमः *

मानवता का मङ्गल प्रभात

भूल सुधार

पृष्ठ २० पर लकावतार सूत्र का जो उद्धरण दिया गया है वह बौद्धधर्म का होनेके कारण उसे पृष्ठ २४ में वर्णित बौद्धधर्म के प्रकरण के साथ पढ़ें तथा पृष्ठ २४ पर प्रभास पुराण तथा श्रीमद्भागवत माहात्म्य के दिये गए उद्धरण को पृष्ठ २० पर हिन्दूधर्म के दिए गए प्रकरण के साथ पढ़ें। भूल के लिए खेद है।

[illegible] सर हरीराम गोयनका स्ट्रीट कलकत्ता



* श्री परमात्मने नमः *

मानवता का मङ्गल प्रभात

लेखक एवं संग्राहक —

पू० ब्र० श्री चुन्नीलालजी देशाई

([illegible])

प्रकाशक—

कल्याणचन्द जैन

मन्त्री

श्री दिगम्बर जैन सम्मेलन

प्रचार विभाग

नं २ सर हरीराम गोयनका स्ट्रीट कलकत्ता

प्राप्तिस्थान —

श्री दिगम्बर जैन सम्मेलन

७ सर हरीराम गोयनका स्ट्रीट

कलकत्ता

नोट—बाहर से मंगवानेवाले सज्जन पोस्टेज के लिए ७ नये पैसे के टिकट उक्त पते पर भेजने की कृपा करें—अपना पता ठीक से लिख कर भेजें ताकि रास्ता भूल न पावे।

मुद्रक —

जवाहिर प्रेस

१।१।१ महात्मा गांधी रोड कलकत्ता ७

◎ हितकर दो शब्द ◎

आय देश भारत सदा से अहिंसामय संस्कृति का केन्द्र रहा है। भारत ने ही दुनिया को धर्म की रोशनी दी है। यह महापुरुष ऋषियों की पावन भूमि है। श्री महावीर स्वामी, श्री बुद्धदेव श्री रामचन्द्रजी, श्रीकृष्णचन्द्र आदि महापुरुष इस भूमिको पावन कर गये और जगतके अज्ञान-अन्धकारको अपनी ज्ञान-ज्योतिद्वारा नष्ट किया एवं ऋषियों ने श्रुति रूप सुभाषित पुष्पों द्वारा प्रकाश किया है। किन्तु आज यह देखकर बहुत दुःख होता है कि इस पवित्र आर्य भूमि पर भी पाश्चात्य देशों के समान मांस और मदिरा का दुर्व्यसन दिनों दिन बढ़ता ही जाता है। मानव ऋषि प्रणीत मानवता का पाठ भूल कर पशुता को अपना रहा है।

पवित्र भारत आज पतन की ओर अग्रसर होकर राक्षसी दानवता में जा रहा है। इस बढ़ती हुई आसुरी लहर को रोकने के लिए और पुनः अहिंसा धर्म और शाकाहार का प्रचार करने के लिए तथा सत्य, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और संतोष को धारण कर भारत की प्रतिष्ठा फिर जगत के सामने हो, इस हेतु यह छोटी-सी पुस्तक का निर्माण हुआ है। सर्व साधारण को हितोपदेश की उपयोगिता बताने के लिए इसमें ऋषि प्रणीत शास्त्रों का यत्किंचित प्रमाण रूपसे प्रकाशित कराया है।

जितने भी पन्थ (सम्प्रदाय) धर्म के नाम पर चलते हैं, उनमें मानव धर्म के बारे में दो मत नहीं हैं।

लीजिये देखिये समभाव से मौन कीजिये।

जैन आगम

सच्चं लोगम्मि सारभूयं

अर्थ—संसार में सारभूत वस्तु सत्य है।

सत्त्वेषु मैत्री गुणीषु प्रमोदं ।
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ॥
माध्यस्थ भाव विपरीत वृत्तौ ।
सदा ममात्मा विदधातु देव ॥

अर्थ—सब प्राणियों से मेरा मैत्री भाव हो, गुणी जनों से मुझे प्रेम हो, दुखित पीड़ित जीवों के प्रति मेरा करुणा-भाव हो, विपरीत वृत्तिवाले विरोधी जीवों के प्रति मेरी माध्यस्थ भावना सदा रहे, यह भगवान से मेरी प्रार्थना है।

मैत्री भावना

खम्मामि सव्व जीवाण सव्वे जीवा खमन्तु मे ।
मित्ती मे सव्वभूदेसु वैरं मज्झ ण केणवि ॥

अर्थ—मैं सब जीवों पर क्षमा करता हूँ, सब जीव मुझ पर भी क्षमा करें, मेरी समस्त प्राणीमात्र से मित्रता है, मुझे किसी से वैर नहीं है।

मातेव सर्वभूतानाम हिंसा हितकारिणी ।
अहिंसैव हि संसारमरावमृत सारिणी ॥
अहिंसा दु:खदावाग्नि प्रावृषेण्य घनावली ।
भवभ्रमिरुगार्तानामहिंसा परमौषधि ॥

शानार्णव

अर्थ—अहिंसा सब प्राणियों के हित करनेवाली माता के समान है और यह अहिंसा ही संसाररूप मरु निर्जलदेश में अमृत की नाली के तुल्य है और दु:खरूपी दावाग्नि को शान्त करने के लिए वर्षाकाल की मेघावली के समान है तथा भव भ्रमणरूप महारोग से पीड़ित के लिए परमौषधि है।

उपनिषद्

सत्य सदा विजयते

अर्थ—सत्य की सदा जय होती है।

गीताजी

निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव।

अर्थ—समस्त प्राणियों के प्रति निर्वैर रहो, शत्रु के प्रति भी वैर भाव मत करो।

(महर्षि पतञ्जलि) योग दर्शन के समाधिपाद ३३

मैत्री करुणा मुदितोपेक्षाणां,
सुख दुःख पुण्यापुण्य विषयाणां।
भावना तश्चित्त प्रसादनम्

अर्थ—सुखी मनुष्यों से प्रेम, दुखियों के प्रति दया, पुण्यात्माओं के प्रति प्रसन्नता और पापियों के प्रति उदासीनता की भावना से चित्त प्रसन्न होता है।

राजा जनक ने पराशर ऋषि से प्रश्न किया है कि—

हे द्विजोत्तम! अहिंसा-धर्म तथा हिंसा-धर्म में कौन धर्म श्रेष्ठ है, और कौन अधर्म श्रेष्ठ है? उसका उत्तर—

हे महाराज जनक! जो हिंसा कर्म से रहित है, वही अहिंसा-धर्म पुरुषों का मनोरथ पूर्ण करता है। इससे अहिंसा-धर्म धर्म है और हिंसा धर्म अधर्म है, (महाभारत शान्ति पर्व २८१ अध्याय पृष्ठ १८८)। अहिंसा में नियुक्त पुरुष सब जीवों के हितकर और पवित्र तथा सर्वत्र सम भाववाला होता है (वाराह पुराण अध्याय १०१ पृष्ठ ५७४) उसी दृष्टि में ढेला, पत्थर और सुवर्ण समान होता है।

"जीव भवतिहि जन्तुषु कर्मणा विपाकः ॥"

मनुस्मृति

अर्थ—जीव जैसा कर्म करता है, वैसा ही कर्म उदय आता है। यह सिद्धान्त सब दर्शनाचार्यों का मन्तव्य है तो फिर हमारे कुछ अजैन भाइयों को इस प्रकार की भ्रान्ति हो गयी है कि रात्रि का भोजन नहीं करना और छान कर पानी पीना मात्र जैनियों की मान्यता है। हमारे ऋषि प्रणीत शास्त्रों में ऐसा कोई उल्लेख है, मिलता नहीं है। किन्तु हम इस बारे में कुछ प्रमाण यहां प्रस्तुत करते इनको आप मान या न मान आपकी खुशी की बात है किन्तु न मानने से श्रुति तो मिथ्या नहीं हो सकती।

जो जीव राग, द्वेष, मोह को जीतता है वह जिन है और जिसने जीत लिया है, वह जिनेन्द्र है उन जिनेन्द्र के उपासक को जैनी कहते हैं। यही बात आपके ऋषियों ने भी बताई है फिर क्या कारण है कि हम हितकर बात को ठुकरा कर अभक्ष्य पदार्थों का भक्षण करते हैं—कराते हैं और हो रहा है। इसका मुख्य कारण हमारी जिह्वा इन्द्रिय की लोलुपता छोड़ कर और क्या हो सकता है? जगत के कोई भी सम्प्रदाय (पंथ) के महापुरुष ने हिंसा में धर्म बताया हो ऐसा न सुना है न पढ़ा है न अनुमान से प्रमाण है किया जा सकता है। प्रथम तो मनुष्य भव मिलना ही मुश्किल (दुर्लभ) है।

कहा है कि—

लब्ध्वा कथं चिन्नरजन्म दुर्लभं।
तथापि पुंस्त्वं श्रुतिपार दर्शनम्।
यस्त्वात्म मुक्त्यैन यतत मूढधी।
स आत्महा स्वंविनिहत्य सत्ग्रहत ॥

श्री मद्भागवत

अर्थ—यह दुर्लभ मनुष्य-देह और सद्ज्ञानप्रापक पुरुषपना प्राप्त हुए भी जो मूढ़ बुद्धिवाला पुरुष मोक्ष के लिए प्रयत्न नहीं करता है वह आत्मघाती मनुष्य असत् संसार को ग्रहण कर स्वयं अपना नाश करता है। क्योंकि—

यह मनुष्य का शरीर जो कि निर्वाण (मोक्ष) की नाव समान है, उस नाव में हम हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह रूपी माल भरते जाते हैं। मांस मद्य, मधु आदि अशुद्ध (अभक्ष्य) अप्राकृतिक आहार जो मन को मलिन, शरीर को रोगी और ध्यान को नाश करता है, इनके द्वारा आत्म-कल्याण कैसे हो सकता है? अतः आत्म-कल्याण के इच्छुक जीवात्माओं को प्रथम पापमय क्रिया एवं अभक्ष्य आहार का त्याग करना चाहिए।

हमारे कितने भाई विटामिन के भ्रम में भी अभक्ष्य का भक्षण करते हैं, किन्तु विटामिन की दृष्टि से भी इनमें विटामिन कम है और हानि अधिक है। लीजिये प्रमाण —

विटामिन के बारे में प्रमाण

The toiler and his food"
By Sir William Earnshow Cooper C I E

बादाम आदि मेवा में ९० से ९१, मक्खन तथा चावल में ८७, गेहूं में ८६, जौं में ८८, घी में ८७, सलाद में ९० अंश विटामिन शक्ति है, जब मांस में २८ अण्डे में २६ अंश विटामिन है और इनके द्वारा शरीर में बहुत उत्पात हो जाते हैं अतः मांसादि अस्वाभाविक आहार होने से निषेध है।

धर्म सर्वत्र एक रूप ही है, जैसे पानी का स्वभाव ठण्डा, नमक का स्वभाव खारा है, चाहे वह किसी देश राष्ट्र का हो। वैसे ही धर्म चाहे किसी सम्प्रदाय का हो, दयामय एक रूप ही है। ईश्वर के अनेक नाम

है, चाहे किसी नाम से पुकारो, किन्तु उनके गुण में कोई दोष हम अज्ञानवश कल्पना से ईश्वर को अन्य प्रकार से मान लें तो हमारी ही अज्ञानता का दोष है, ईश्वर में नहीं। कहा भी है कि

त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि।
नूनं विभो हरिहरादिधिया प्रपन्ना ॥
किं काचकामलिभिरीश सितोऽपि शंखो।
नो गृह्यते विविध वर्ण विपर्ययेण ॥

हे स्वामिन्! अन्य मतावलम्बी पुरुष भी अज्ञान अन्धकार से रहित आपको ही निश्चय से विष्णु, महादेव आदि नामों से पूजते हैं क्या? हे प्रभो! जिनकी आँख पर रंगदार चश्मा है अथवा जिन्हें पीलिया रोग हो गया है, ऐसे पुरुषों के द्वारा शंख सफेद होने पर भी तरह तरह के विपरीत वर्णों से नहीं ग्रहण किया जाता क्या? अर्थात् किया जाता है।

भव बीजांकुर जनना रागाद्या क्षयमुपागता यस्य।
ब्रह्मा वा विष्णु वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥

अर्थ—संसार की परम्परा को बढ़ानेवाले ऐसे रागादि दोष जिनका क्षीण हो गया है चाहे वह ब्रह्मा हो, विष्णु हो, महादेव हो कि जिन हो—कोई भी हो—उनको मेरा नमस्कार हो।

बस इतनी समभावना हमारे में आ जाय तो फिर धर्म के नाम पर झगड़ा, हिंसा, व्यामोहपना क्या? बारम्बार शान्त भाव से आत्म हृदय में विचार करो सत्य की खोज करो अवश्य मिलेगा, पास है, दूर नहीं दृष्टि घुमानी है।

सत्यान्वेषी एवं अहिंसा के पुजारी
ब्र० चुन्नीलाल देशाई
(गुजरात)



॥ श्री परमात्मने नमः ॥

मानवता का मंगल प्रभात

ॐ मङ्गलाचरण ॐ

असौ स्वसाक्षिको भावो यतः स्वेनानुभूयते ।
अतः परं स्वयं साक्षात्प्रत्यगात्मा न चेतरः ॥

विवेक चूडामणि २१८ शंकराचार्य

अर्थ—अपना यह आत्मा स्वयं ही साक्षीभूत है क्योंकि अपने-आप में ही अनुभव किया जाता है इसलिए इससे परे कोई अन्य अपना साक्षात् अन्तरात्मा नहीं है।

इसलिए—

स्वानुभूत्या स्वयं ज्ञात्वा, स्वमात्मानमखण्डितम् ।
स्वः सिद्धिं सुसुखं तिष्ठन्निर्विकल्पात्मनात्मनि ॥

विवेक चूडामणि

अर्थ—अपने अनुभव से अखण्ड आत्मा को स्वयं जान कर निज सिद्धि के लिए निर्विकल्प भाव से आत्म स्वरूप मग्न निजात्मा में ही स्थिर रहो।

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः ।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥
नादत्ते कस्यचित्पापं न कस्य सुकृतं विभुः ।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ॥

गीता अध्याय ५ श्लोक १४-१५

अर्थ—ईश्वर जगत का कर्ता नहीं है, न कर्मों का उत्पन्न करता है, इसी प्रकार कर्मों के फल की योजना नहीं करता, स्वभाव से होता है। परमेश्वर किसी का पाप नहीं लेता और न पुण्य लेता है। अज्ञान के द्वारा ज्ञान पर परदा पड़ने से प्राणीमात्र मोह में फँस जाते हैं।

> स्व स्था विद्या बन्ध सम्बन्ध मोक्षा
> स्सत्य ज्ञानानन्द स्वात्म लब्धी ॥

विवेक चूड़ामणि

अर्थ—अपने अज्ञान रूप बन्धन का समाप्त (सम्बन्ध) छूट जाने से ही सच्चिदानन्द रूप आत्मा की प्राप्ति होती है।

> ज्ञानेन तुतद् नान येषा न शित मात्मन ।
> तेषा आदित्य वज्ज्ञान प्रकाशयति तत्पर ॥

गीता अ० ... १८

> सुखस्य दु खस्य न कोऽपि दाता ।
> परो ददातीति कुबुद्धि रेषा ॥
> अह करोमीति वृथाभिमान ।
> स्वकर्म सूत्र ग्रन्थितोहिलोक ॥

अध्यात्म रामायण

अर्थ—सुख दुख का कोई देनेवाला नहीं है, अपने अज्ञान के कारण से ही जीव दुख पाता है। इसलिए अहङ्कार और अभिमान बेकार मत कर, क्योंकि तेरे अच्छे बुरे कर्म ही तुझे लोक में घुमाते हैं यही श्रुति का सार है।

— जल छान कर पीने का प्रमाण —

दृष्टि पूतं न्यसेत्पादं वस्त्र पूतं पिबेज्जलं ।
शास्त्र पूतं वदेद्वाक्यं मन पूतं समाचरेत् ॥

लिङ्ग पुराण अ०

अर्थ—मार्ग चलते हुए देख कर चलना चाहिए, जल या पेय पदार्थ वस्त्र से छान कर पीना चाहिए, वचन शास्त्रानुसार प्रमाणिक बोलना चाहिए और मन को शुद्ध कर आचरण करना चाहिए।

दृष्टि पूतं न्यसे पादं वस्त्र पूतं जलं पिबेत् ।
सत्य पूतां वदे द्वाचं मन पूतं समाचरेत् ॥

मनुस्मृति अ० श्लोक

अर्थ—भूमि पर देख कर पाव रखें, पानी वस्त्र से छान कर पीया करें, सत्य वचन ही को बोलें और मन को शुद्ध कर (इच्छा रहित) आचरण करना चाहिए।

जल को क्यों छानना चाहिए —

सूक्ष्माणि जन्तूनि जलाश्रयाणि ।
जलस्य वर्णाकृति संस्थितानि ॥
तस्माज्जलं जीवदया निमित्तं ।
निर्ग्रन्थ शूराः परिवर्जयन्ति ॥

भागवत पुराण

अर्थ—जल के आश्रय में सूक्ष्म जन्तु रहते हैं, उनका वर्ण व आकार जल के समान होता है, इसलिए जीवदया के लिए वस्त्रत्यागी पुरुष जल का भी त्याग करते हैं (अर्थात् निर्जल उपवास करते हैं) अथवा बिना छाना हुआ जल नहीं पीते हैं।

य कुर्यात् सर्व कर्माणि वस्त्र पूत न वारिणा ।
स मुनि स महासाधु स योगी स महाव्रती ॥

महाभारत शान्तिपर्व तृतीय

अर्थ—जो मन ही सब कर्मों को उन पानीसे करता है पानी छान कर पीता है वही मुनि है वही साधु है वही योगी है, वही महाव्रती है।

छन्ना का माप

त्रिंशदंगुल विस्तीर्ण विंशदंगुल मायत ।
तद्वस्त्रं द्विगुणीकृत्य गालयित्वोदकं पिबेत् ॥ ३७ ॥
तस्मिन् वस्त्रे स्थितान् जीवान् स्थापयेज्जल-
मध्यत एवं कृत्वा पिबेत्तोयं स याति परमांगतिं ॥३८॥

उत्तर मीमांसा

अर्थ—तीस अंगुल का चौड़ा ... अंगुल लम्बा ऐसा वस्त्र कु, ... करि नल ... पवित्र करि ... छान करि जल पीवे, उस वस्त्र के मध्य में आये जीवनि को उसी जल में प्रवेश करें। ई रीति करि जल पीवे, सो परम गति प्राप्त होय।

लूताम्यतन्तु गलिते ये बिन्दौ सन्ति जन्तव ।
सूक्ष्मा भ्रमर मानास्ते नैव मान्ति त्रिविष्टपे ॥ ३४ ॥

(उत्तर मीमांसा)

अर्थ ... महीन वस्त्र के ... करि छना हुआ जल में जो स.म जंतु हैं ... छान ... वस्त्र करि भी उस जल को साधन करण को शक्ति नहीं ॥ ३४ ॥ (तात जल छान कर पीना भला है, यह भाव है।

जल छान कर न पीने का फल

मरण्मरेण यत्पाप कुरुते मत्स्य बन्धक ।
तत्पाप जायत नित्य मपूत जल सग्रहात ॥ ३३ ॥
(लिङ्ग पुराण)

अर्थ—मछली का पकड़नेवाला जो पाप एक वर्ष में करता है वह बिना छाना जल का संग्रह करने वाले को होता है ॥ ३३ ॥

रात्रि भोजन (त्याग) एवं मद्य मांस मधु के त्याग का प्रमाण

अस्तगते दिवानाथ, ताय क्ष रुधिर मुच्यते ।
अन्न मांस सम प्रोक्त, मार्कण्ड महर्षिणा ॥
(मार्कण्डेय पुराण)

अर्थ—सूर्य के अस्त होने के बाद रात्रि में जल रुधिर के समान है अन्न मांस के समान है। ऐसा मार्कण्डेय ऋषि का वाक्य है।
(* अर्थात् जल पानी निषिद्ध है।)

चत्वारो नरक द्वार, प्रथम रात्रि भोजनम् ।
परस्त्री गमन चैव, सधानानन्त कायतें ॥ ३६ ॥
ये रात्रौ सर्व दाहार, वर्जयन्ति सुमेधस ।
तेषा पक्षोपवासस्य, फल मासेन जायते ॥ ३२ ॥
नोदक मपि पातव्य, रात्रा वत्र युधिष्ठिर ।
तपस्विना विशेषेण, गृहिणा च विवेकिना ॥ ३४ ॥

अथ—नरक के चार द्वार है, प्रथम रात्रि भोजन, (२) परस्त्री गमन करना (३) अचार मुरब्बा आदि खाना, (४) कन्द मूल आदि अनन्त काय का भक्षण करना, जो बुद्धिमान रात्रि मे सब तरह के आहार का त्याग कर देते हैं, उनके एक माह मे पन्द्रह उपवास हो जाता है अर्थात् उनको पन्द्रह उपवास का फल प्राप्त हो जाता है। श्री कृष्ण भगवान युधिष्ठिर से कहते है कि—हे युधिष्ठिर ! विचार-शील गृहस्थो को रात्रि मे जल नहीं पीना चाहिये और तपस्वियो को तो विशेषता से साथ त्याग कर देना चाहिये।

रसोनभ्रसन चैव पलाण्डु मूलपिण्डक।
मद्य मांस सुरा चैव मूलकन्तु विशेषत ॥

प्रभास पुराण ११२

अथ—प्याज का भक्षण किर कन्द विशेष पिंडालू, सहत्, मांस, सुरा पान मूली सब ही सु विशेष त्याज्य हैं॥ ११२ ॥

मद्यमांसाशन, रात्रौ भोजन, कन्द भक्षणम।
ये कुर्वन्ति वृथास्तपा, तीर्थयात्रा जपस्तप ॥
वृथा एकादशी प्रोक्ता, वृथा जागरण हर।
वृथा च पुष्करीयात्रा, वृथा चान्द्रायण तप ॥

पद्मपुराण भाग ७-३८

अथ—जो मद्य मांस और रात्रि भोजन कन्द भक्षण करता है, उसकी तीर्थ यात्रा, जप तप वृथा है कोई कार्यकारी नहीं है और उसे प्राणी का एकादशी तप जागरण और पुष्करी-यात्रा चन्द्रायण तप आदि वृथा है।

सप्त ग्रामेषु दग्धेषु, यत्पाप जायते नृणाम।
तत्पाप जायते पुमा, मधुबिन्दु के भक्षणात् ॥

अर्थ—सात गांवों को जलाने में जो पाप होता है, उतना पाप शहद की एक बूँद खाने से होता है। जो लोग मधु शहद ही खाते रहते हैं, व अवश्य नरक में जाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

जीवाण्ड मधु मश्रुत, म्लेच्छोच्छिष्ट न संशय ।
वर्जनीय सदा विप्रैः, परलोकाभि कांक्षिभिः ॥

अप्पयद पुराण

अर्थ—जीवों की अण्डा करके मधु बनते हैं और म्लेच्छ उच्छिष्ट है, याम संशय नाहीं, जो ब्राह्मण परलोक में सुख चाहता है, तिसको त्याग कर देना चाहिए।

मद्य मांसे मधुनि च नवनीते तक्र वा वहि ।
उत्पद्यन्ते निपद्यन्ते, तद्वर्णास्तत्र जन्तवः ॥

नाग पुराण

अर्थ—मद्य में मांस में मधु में और भिन्न किया छाछ की (मक्खन) में उन्हीं रंग के जीव उत्पन्न और नष्ट होते हैं।

सप्त ग्रामेषु यत्पापमग्निनाभस्म सा त्कृते ।
तत्पाप जायते जन्तोर्मधु बिन्दु क भक्षणात् ॥ १६ ॥

मनुस्मृति

अर्थ—सात ग्राम अग्निकर भस्म करने में जो पाप होय है, सो पाप मधु (शहद) का एक बिन्दु का भक्षण से ही होय है।
(☆ 'जन्तु मधु' ऐसा पाठ महाभारत शान्तिपर्व तृतीय अधिकारमें है)

यो ददाति मधु श्राद्धे, मोहितो धर्म लिप्सया ।
स याति नरकं घोरं, खादकैः सह लम्पटैः ॥ ५१ ॥

महाभारत अ० ६ पृ० ३१४

अर्थ—जो पुरुष यम की आज्ञा करि आदम मोह करि मधु (सहत) देते हैं, सो पुरुष खानेवाले लम्पटी पुरुषों सहित नरक में जाते हैं।

(श्रीमद्भागवत गीता तत्व तृतीय अधिकार)

तद्यादामिष श्राद्धे न चाद्यात् धर्म तत्ववित ।
मुन्यन्नैः स्यात् परा प्रीतिर्यथा न पशु हिंसया ॥ ७५ ॥

श्री मद्भागवत स्कन्ध ७ अ० १५ श्लोक ७५

अर्थ—धर्म तत्त्व के ज्ञाता पुरुष श्राद्ध में न किसी को मांस देते हैं और न खाते हैं क्योंकि मुनियों के खाने योग्य ब्रीही आदि शुद्ध अन्न से पितरों को जैसी परम प्रीति होती है वैसी पशु की हिंसा से कदापि नहीं होती।

यो यजेताऽश्वमेधेन, मासि मासि यतः व्रतः ।
वर्जयेत् मधु मांस च सममेतत् युधिष्ठिर ॥ १० ॥

महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११४ श्लोक १

अर्थ—कोई एक मनुष्य यदि सौ वर्ष तक महीने महीने अश्वमेध यज्ञ करे और दूसरा केवल मधु मांस का ही त्याग कर तो हे युधिष्ठिर ! ये दोनों तुल्य होते हैं।

मेद मूत्र पुरी षाद्यैः रसाद्यं वर्धित मधु ।
छर्दि लालामुखथानै, भक्षन्ते ब्राह्मणं कथं ॥

मार्कण्डेय पुराण मत

अर्थ—जो मधु, चर्बी, मूत्र, विष्ठादि से तथा लार और मुख की बहती हुई लार से, उद्भिन्न होता है, उस मधु ब्राह्मणों द्वारा कैसे खाया जाय ? अर्थात् न खाया जाय।

सुरा मत्स्यान् मधु मांस, मासवं कृसरौदनम् ।
धूर्तैः प्रवर्तितं ह्येतद् नैतद् वेदेषु कल्पितम् ॥

सर्वं कर्म स्व हिंसाहि धर्मात्मा मनुरब्रवीत् ।
काम काद् विहिंसन्ति, बहिर्वेद्यान्पशूनर ॥
विचक्नु स्मृति

अर्थ—मदिरा, मछली, मांस, आसव आदि का यज्ञ मे उपयोग करना वेदों मे कहीं नहीं है, परन्तु स्वार्थी धूर्तों ने प्रवृत्ति चला दी है। धर्मात्मा मनु महाराज ने तो सभी कामों में अहिंसा का ही विधान किया है। यज्ञ वेदी के बाहर पशुओं की बलि हो रही है, यह सब मनमानी क्रिया है।

वर्जयेन मधु मांस च, गन्ध रमान स्त्रिय।
शुक्तानि यानि सर्वाणि, प्राणिनाचैव हिंसनम् ॥
मनुस्मृति अध्याय २

अर्थ—शहद, मांस, चन्दन इत्र आदि पदार्थ, फूल मालायें, रस, स्त्रियाँ और सब प्रकार के आसवों का तथा प्राणियों की हिंसा का सर्वथा त्याग करें।

मांस भक्षि यताऽमुत्र यस्य मांसमिहाद्म्यहम् ।
एतन्मांसस्य मांसत्व प्रवदन्ति मनिषिण॰ ॥ ५५ ॥
मनुस्मृति

अर्थ—मांस शब्द का महात्मा मनु ने ऐसा अर्थ किया है— जिसका मैं मांस खाता हूँ, वह मुझको जन्मान्तर मे खायेगा।

न कृत्वा प्राणिना हिंसा, मांसमुत्पद्यते क्वचित् ।
न च प्राणिवध स्वर्गस्तस्मात्मांस विवर्जयेत् ॥
मनुस्मृति अ० ५ श्लोक ४८

अर्थ—प्राणियों की हिंसा किये बिना मांस कहीं पैदा नहीं होता है और प्राणी का वध स्वर्ग सुख नहीं देता, इसलिए मांस को सर्वथा त्याग

कर देना ही उचित है अन्यथा मास-भक्षी जीव-हत्या का दोषी है।

माहिंस्यात् । यजुर्वेद अ० १८

अर्थ—हिंसा मत करो।

मित्रस्याह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे ।

अर्थ—मैं सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखता हूँ।

वर्षे वर्षेऽश्वमेधेन योयजेत शत समा ।
मांसानि न च खादेद् यस्तयो पुण्यफल समम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—प्रत्येक वर्ष में एक पुरुष अश्वमेध करके सौ वर्ष तक यज्ञ करे और एक पुरुष बिल्कुल मांस न खाय तो उन दोनों का समान ही फल है।

देवापहार व्याजेन, यज्ञ व्याजेनपेऽथवा ।
घ्नन्ति जन्तूनगतघृणा घोरा ते यान्ति दुर्गतिम् ॥१॥

अविमार्गियां च वद्गा

अर्थ—देव पूजा के निमित्त या यज्ञ कर्म के निमित्त से जो निर्दय पुरुष प्राणियों को निर्भय होकर मारता है, वह घोर दुर्गति में जाता है।

हिंसा और हिंसा का फल

अन्धे तमसिम उनाम पशुभिर्येयजाम ह ।
हिंसा नाम भवेन्न धर्मो न भूतो न भविष्यति ॥

अर्थ—जो लोग पशु से यज्ञ करते हैं, उससे अन्धकार मय स्थानों में डूबते हैं, क्योंकि हिंसा से न कदापि धर्म हुआ न होगा।

यावन्ति पशु रोमाणि पशु गात्रेषु भारत ।
तावन्ति वर्ष सहस्राणि पच्यन्ते पशु घातका ॥

(भागवत पुराण श्री कृष्ण भगवत)

अर्थ—पशु के शरीर में जितने रोम हैं, उतने हजार वर्ष तक पशु-नाश में अवश्य दुःख भोगेगा।

न च ध्यानं न च स्नानं, न दानं न च सत्क्रिया ।
सर्वे ते निष्फलं यान्ति जीव हिंसा रतोत्तिथ ॥ (मनुस्मृति)

अर्थ—जीवों की हिंसा करनेवाले के ध्यान, स्नान, दान आदि शुभ क्रियाएं सब निष्फल हो जाती है।

पशून् हत्वा तथा त्वम्नायाऽचयेत् माम शोणितैः ।
तावन्नेन् नरके वासो यावच्चन्द्र दिवाकरौ ॥
कल्प भारती पद्मपुराण खण्ड १ अध्याय १०५

अर्थ—पार्वती ने शिवजी से कहा—पशुओं को मार कर जो मांस रुधिर से हमारी तुम्हारी पूजा करता है, उसका तबतक नरक में वास होगा, जबतक कि सूर्य और चन्द्रमा है।

प्राणि घातात्तु यो धर्मं, मीहते मूढ मानसः ।
स वाञ्छति सुधावृष्टिं कृष्णाऽहिमुख कोटरात ॥ पुराण

अर्थ—जो प्राणियों के घात से धर्म चाहता है, वह काले सर्प के मुख रूप खोखर से अमृत की वृष्टि को चाहता है।

तस्य तेनानुभावेन मृगहिंसाऽऽत्मनस्तदा ।
तपो महत् समुच्छिन्नं तस्माद् हिंसा न यज्ञिया ॥
महाभारत शान्तिपर्व मोक्षाधिकार २७३ पृ० १९४

अर्थ—स्वर्ग के अनुभाव से एक मुनि ने मृग की हिंसा की, तब उस मुनि का जन्म भर का बड़ा भारी तप नष्ट हो गया। अतः हिंसा से यज्ञ भी हितकर नहीं है।

यूप छित्वा पशून् हत्वा कृत्वा रुधिर कर्दमम् ।
यद्येव गम्यते स्वर्गे नरक केन गम्यते ॥

अर्थ—यज्ञस्तम्भ को छेदन से, पशुओं को मारने से, रुधिर की कीचड करने से यदि स्वर्ग में गमन हो तो नरक में कौन कर्म से गमन हो सकेगा अर्थात् जीव हिंसा के बराबर पाप दुनियां भर में नहीं है।

मदर्थं यदि कुर्वन्ति प्राणिनाम जीव घातनम् ।
कोटि कल्प शत शम्भो रौरवे नरसेद् ध्रुवम् ॥ रुद्र पुराण

अर्थ—रुद्रपुराण में कहते हैं कि—हे शम्भो ! यदि मेरे लिए प्राणियों का जीव घात किया जाता है अर्थात् मेरे नाम पर किसी तरह की बोलारी बोल कर जीवों की हिंसा करते हैं, वे करोड़ों कल्प काल तक निश्चय से घोर नरक में महान् दुःख भोगते हैं।

यज्ञ कृत्वा पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिर कर्दमम ।
यद्येव गम्यते स्वर्गे, नरक केन गम्यते ॥ स्कन्द पुराण

अर्थ—यदि यज्ञ में पशुओं की हत्या कर उनके रक्त की कीचड में हाथ रङ्ग कर स्वर्ग मिलता है तो बताओ नरक में कौन कर्म करने से जीव जाता है।

सर्व वेदाश्च यज्ञाश्च, तपो दानादि चानघ ।
जीवा भय प्रदानेन, न कुर्वीरन फलान्यपि ॥ भागवत

अर्थ—जो जीवों को अभय दान नहीं करते उनके सब वेदों का पढ़ना, यज्ञ करना, तप दान और पुण्य करना सब निष्फल (व्यर्थ) है।

अष्टा दश पुराणेषु, व्यासस्य वचनद्वयम् ।
परोपकार पुण्याय, पापाय पर पीडनम् ॥ वेद व्यास ४४

अर्थ—अठारह पुराणों में व्यास जी के दो ही वचन मुख्य हैं कि पर उपकार बराबर पुण्य नहीं और पीड़ा यानी जीव हिंसा बराबर पाप नहीं।

यस्तु मत्स्यानि मांसानि भक्षयित्वा प्रपद्यते।
अष्टा दशापराध च कल्पयाम वसुन्धरे॥ २१॥
यस्तु वराह मांसानि प्रापण नोपपादयेत।
अपराध त्रयो विंश कल्पयामि वसुन्धर॥ २६॥
सुरा पीत्वा तु यो मर्त्य कस्चिदुपसर्पति।
अपराध चतुर्विंश कल्पयामी वसुन्धरे॥ २७॥
वराह पुराण । ११५ २६ २७

अर्थ—जो मछली का मांस भक्षण करता है वह अठारह अपराधों का अपराधी है तथा सुअर का मांस भक्षण करता है, वह तेईस अपराधों का भागी होता है और मदिरा (शराब) पीनेवाला चौबीस अपराधों का अपराधी है।

— मांस खाने का निषेध —

न गङ्गा न च केदार, न प्रयागो न पुष्करम्।
न च ज्ञान न च ध्यान, न होमो न जप क्रिया॥ १५॥
न दान न च होम, न च पूजा न गुरोर्नति।
यदि खादन्ति मांसानि, सर्वमेव निरर्थक॥ १६॥
क्व मांस क्व शिवेभक्ति, क्व मद्य क्व शिवार्चन।
मद्य मांसानुरक्तस्यां, दूर तिष्ठति शङ्कर॥ १७॥
किं जाप्य होम नियमै, तीर्थ स्नानेन नारद।
यदि खादन्ति मांसानि, सर्वमेव निरर्थक॥ १८॥

अल्पायुषो दरिद्राश्च, पर कर्मोपजीविन ।
दुष्कुलेषु च जायन्ते, ये नरा माम भक्षका ॥ २२ ॥
तिल सर्षप मात्र तु यो माम खादते नर ।
सयाति नरक घोर यावचन्द्र दिवाकरौ ॥ २३ ॥
अस्थिवासी सदा रुद्रो, मासवासी जनार्दन ।
शुक्रेच वसति ब्रह्मा, तस्मानमाम न भक्षयेत् ॥ २४ ॥
न ग्राह्य न च दयानि, स्व कुटुम्बाद्धिवेश्मिना ।
अग्नि मधु विष शस्त्र, मद्य माम तथैव च ॥ २५ ॥

अर्थ—जो पुरुष मास खावे, उसका गङ्गा स्नान व्यर्थ है, केदारनाथ जाना भी कुछ नहीं, प्रयाग जाना, पुष्करराज जाना कुछ कार्यकारी नहीं। उसकी ज्ञान ध्यान, तप जप सब क्रिया निरर्थक है ॥ १६ ॥

दान, होम, पूजा, गुरु नमस्कार, सब जो मनुष्य मांस खाता है तो, उनकी क्रिया व्यर्थ है।

कहा मांस और कहा शिवमें भक्ति, कहा मद्य कहा शिवका पूजन, मद्य मांस के खाने मे अनुरक्त ऐसे पुरुषों से शिव दूर रहता है ॥१७॥

हे नारद! जो कोई मांस खावे, उसके जाप्य, होम नियम करि क्या फायदा होय और तीर्थ स्नान करि क्या होय अर्थात् सब व्यर्थ है।

जो नर माम भक्षण करते है, वह अल्पायुवाले दरिद्री पर की सेवा से उदर भरनेवाले नीच कुल मे ही उत्पन्न होते है ॥ २२ ॥

जो मनुष्य तिल वा सिरस्या प्रमाण माम भक्षण करे तो वह मनुष्य जब लग चन्द्र सूर्य रहेगा तब लग नर्क मे रहेगा। महादेव सदा अस्थि (हाड) मे रहता है जनार्दन विष्णु माम मे बसता है, शुक्र मे रहे है तातें मास को कभी भी भक्षण नहीं करना ॥ २२-२४ ॥

ज्ञानी पुरुष अपने कुटुम्ब में भी अग्नि, मद्य, विष, शस्त्र, मत्स्य, मांस—ये वस्तु न लेवे और न देवे ॥ २५ ॥

—— मांस खाने का फल ——

स्वमांसं परमांसेन यो वर्द्धयितुमिच्छति ।
नास्ति क्षुद्र तरस्तस्मात् मनुष्यमतरो नरः ॥
महाभारत अनु० पर्व अध्याय ११६

अर्थ—जो दूसरे के मांस से अपने शरीर को शक्तिशाली बनाना चाहता है, उससे अधिक क्षुद्र कोई नहीं है, वह जगत में महा निन्दनीय नर है ।

मदर्थे शिव कुर्वन्ति तामसा जीव घातनम् ।
आकल्प कोटि नरके तेषां वासो न संशय ॥
पद्मपुराण शिवपति दुर्गा

अर्थ—पार्वतीजी शिवजी को कहती है—जो हमारे नाम पर पशुओं को मार कर उनके मांस और खून से हमारी पूजा करते है, उनको करोड़ों कल्प तक नरक में महान दुःख सहन करने पड़ेंगे इसमें कोई संशय नहीं ।

जो अपने हाथ से जीव हत्या करता है, मांस खाता है, बेचता है, पकाता है, खरीदता है या उसका करने की राय देता है वे सब जीव-हिंसा के महापापी है । मनुस्मृति ५ । १५

मांस खानेवाले को नरक में गरम तेल के कड़ाओं में वर्षों तक पकाया जाता है । महाभारत श्रीकृष्णार्जुन ११ । २१

यह बड़े दुःख की बात है कि—फल, मिठाई आदि स्वादिष्ट भोजन छोड़ कर कुछ लोग मांस के पीछे पड़ रहे है ।

महाभारत श्रीकृष्णार्जुन ११ । १२

— द्विदल कन्दमूल त्याग के प्रमाण :—

यस्मिन् गृहे सदा नित्य मूलकः पच्यते जनैः ।
श्मशान तुल्य तद्वेश्म पितृभि परिवर्जितम् ॥ ४३ ॥
मूल कन सम चान्न यस्तु भुक्ते नराधम ।
तस्य शुचिर्न विद्यत चान्द्रायण शतैरपि ॥ ४४ ॥
भुक्तं हलाहलं तेन कृत चाभक्ष्य भक्षणम् ।
वृन्ताक भक्षण चापि नरो याति च रौरवम् ॥ शिव पुराण

अर्थ—जिसके घर में लोग मूली पकाते हैं, वह घर श्मशान के समान है, उसमे पितर लोग कभी नहीं आते हैं। जो लोग कन्दमूल खाते हैं, जो अधम नर कन्दमूल के साथ अन्न भोजन करते हैं, उनकी शुद्धि सैकड़ो चन्द्रायण व्रतो से भी नहीं हो सकती। इस प्रकार कन्दमूल भक्षण करने मे पाप है तथा जिसने बैंगन खा लिया उसने हलाहल विष खा लिया और जो अभक्ष्य भक्षण करता है, वह अधम पुरुष रौरव नरक मे जाता है।

पुत्र मांस वर भुक्त, न तु मूलक भक्षणम् ।
भक्षणान्नरक याति वर्जनात् स्वर्ग माप्नुयात् ॥
अज्ञानेन मया देव, कृत मूलक भक्षणम् ।
तत्पापम् प्रलय यातु, गोविन्द ! तव कीर्तनात् ॥
रसोन गृंजन चैव, पलाण्डुन् पिंड मूलक ।
मत्स्य मांस सुराम् चैव मूलक च विशेषत ॥
महाभारत प्रभास खण्ड

अर्थ—पुत्र का मांस खा लेना अच्छा, परन्तु कन्दमूल खा लेना अच्छा नहीं है, क्योंकि कन्दमूल का भक्षण करने से यह जीव नरक

में जाता है और कन्दमूल का त्याग कर देने से जीव को स्वर्ग की प्राप्ति होती है। भक्त लोग भगवान श्रीकृष्णदेव से कहते हैं कि— हे गोविन्ददेव! हमने अपने अज्ञान से कन्दमूल खाया हो सो आपकी स्तुति करने से हमारे वे सब पाप नष्ट हो जाय। लहसुन, गाजर, प्याज, शलगम, मूली, मछली का मांस और मद्य—इनका विशेष रीति से त्याग कर देना चाहिए।

मृते स्वजन मात्रेऽपि, सूतकं जायते किल।
अस्तं गते दिवानाथे, भोजनं क्रियते कथं॥
रक्ता भवन्ति तोयानि, अन्नानि पिशितानि च।
रात्रि भोजन सक्तस्य, ग्रासेन मांस भक्षणम्॥
नैवाहुतिर्न च स्नानं, न श्राद्धं देवतार्चनम्।
दानं च विहितं रात्रौ, भोजनं तु विशेषतः॥
उदुम्बरं भवेन्मांसं, तोयं पूतं वस्त्रकं।
चर्म वारि भवेन्मांसं, मांसं च निशि भोजनम्॥
उलूक काक मार्जारा, गृद्ध शम्बर शूकरा।
अहि वृश्चिक गोधाद्या जायते निशि भोजनात्॥

(महाभारत में भी है) मार्कण्डेय पुराण

अर्थ—जिस प्रकार कुटुम्ब में किसी कुटुम्बी के मर जाने पर सूतक हो जाता है, उसी प्रकार सूर्य अस्त होने से भी सूतक लग जाता है, फिर भला सूतक में भोजन किस प्रकार करना चाहिये, रात्रि में जल रुधिर के समान और अन्न मांस के समान हो जाता है, इसलिए रात्रि में भोजन की लम्पटता रखनेवाले के लिए एक ग्रास मात्र भोजन करना भी मांस भक्षण के समान है। रात्रि में आहुती देना,

करना, श्राद्ध करना, देव पूजा करना, दान देना मना है तथा रात्रि में भोजन करने का त्याग विशेष रीति से बतलाया है, फिर भी बतलाया है कि उदम्बर फल भी मांस है, बिना छना जल भी मांस है चमड़े व बर्तन में रखा हुआ जल, घी, दूध आदि भी मांस है, रात्रि में भोजन करना भी मांस भक्षण है, रात्रि में भोजन करने से यह जीव परलोक में उल्लू, कौवा, बिल्ली, गिद्ध, सूअर, सर्प बिच्छू, गोहरा और छिपकली आदि योनियों में पैदा होता है।

वर भुक्तं पुत्र मांसं, नतु मूलक भक्षणम्।
भक्षणात् नरकं याति, वर्जनात् स्वर्गमाप्नुयात् ॥ शिव पुराण

अर्थ—पुत्र का मांस खाना अच्छा है किन्तु मूली खाना महापाप है, इसके खानेवाले को स्वर्ग कभी नहीं मिलता हमेशा ही नरक में निवास करना पड़ता है।

रक्त मूलक मत्याहु तुल्य गौमांस भक्षण।
श्वेतन्तु विद्धि कौन्तेय मूलकं मदिरोपमम् ॥ पद्मपुराण

अर्थ—हे पार्थ! जितने भी लालकन्द हैं गाजरादि गाय के मांस सदृश्य हैं तथा सफेद (मूली) कन्द भी मदिरा समान है।

शुष्काणि भुक्त्वा मांसानि, भौमानि कवका नि च।
अज्ञात चैव सूनास्थं मत स्व व्रतं चरेत् ॥
मनुस्मृति अध्याय ११ श्लोक १५५

अर्थ—सुखा मांस और भूमि में उत्पन्न जमीन कन्द (कुकुरमुत्ता आदि) को जहां तक भक्ष्याभक्ष्य का ज्ञान न हो वहां तक अज्ञान में खाया हुआ को व्रत से शुद्धि कर किन्तु ज्ञान होने के बाद न खायें।

कन्द मूलादच ये मूढ मुक्ते देव जनार्दन।
भक्षयन्ति नरा पार्थ ते वै नरक गामिन ॥ ५७ ॥

गोरस माम मध्येषु, मुद्गादिषु तथैव च।
मथ्रमाण भवेन्नून, माम तुल्य युधिष्ठिर ॥४८॥ प्रभास पुराण

अर्थ—हे पार्थ! जनार्दन देव शयन कर पीछे ज्या मनुष्य कन्द मूलादि भक्षण करते हैं वह नरकगामी है ॥४७॥

हे युधिष्ठिर! गोरस, दही मठा उड़द के साथ मे या मूग मोठ विगैरह द्विदल वस्तु म मिला कर भक्षण करना मांस तुल्य है ॥४८॥

लहसन गृञ्जनञ्चैव, पलाण्डु पिंड मूलकं।
करम्भया निचान्यानि हीना निरय वर्णत ॥
मार्कण्डेय पुराण प्रथम पाद अ० ११ श्लोक ९

अर्थ—लहसन, पियाज, मूली करम्भ और इनके सिवाय और जो नीच वस्तु है, वह सब वर्जित है। सिवाय शब्द लगाने से मालूम होता है कि जमीन के अन्दर पैदा होनेवाले कन्दमूल न खाना चाहिये।

लहसन गृञ्जनञ्चैव, पलाण्डु मूल पिंडकं।
मधु मांस सुरा चैव, मूल कन्तु विशेषत ॥ प्रभास पुराण ११

अर्थ—प्याज, कन्दमूल, पिंडालू, शहद, मांस, सुरापान—ये नहीं खाने चाहिए।

नरक द्वाराणि चत्वारि, द्विदल माम गोरस।
मधुनालम पूता युक्त द मन्धान भक्षण ॥ मनुस्मृति

अर्थ—नरक के चार द्वार हैं, कच्चा गोरस के साथ द्विदल (याने दो फाड वाला अन्न) खाना, सहत, बिना छना जल पीना, जमीन कन्द खाना और सन्धान (अचार) भक्षण—ये चार नरक में जाने का द्वार है।

योऽतिक्रम्य मुनेर्वाक्य, माम भक्षति दुर्मति
लोकद्वय विना। [illegible] दीक्षित । [illegible]

लाभार्थ हन्यते प्राणी, मांसार्थ दीयतेधनम् ।
उभौ तौ पापकर्माणौ, पच्यते रौरवादिषु ॥
उद्धावनार सूत्र अध्याय ८

अर्थ—जो दुर्बुद्धि, बुद्ध की आज्ञा का उल्लंघन करके मांस खाता है, वह इस तथा परलोक दोनों का नाश करता है, प्राणियों की हत्या लाभ के लिए की जाती है, क्योंकि मांस के लिए धन दिया जाता है, इसलिये पशु हिंसा करने और उसके मांस का भक्षण करनेवाले दोनों नरक की अग्नि में पकाये जाते हैं। उद्धावनार अध्याय ८

अहिंसा ही धर्म है

अहिंसा सत्यमस्तेय ब्रह्मचर्यं सुसंयम ।
मद्य मांस मधु त्यागो रात्रि भोजन वर्जनम् ॥
मार्कण्डेय पुराण श्लोक १६

अर्थ—सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और पञ्च इन्द्रियों को वशमें करना, मांस, मद्य, मधु, रात्रि भोजनका त्याग, यह सब अहिंसा का विस्तार है।

जरायुजाण्डजोद्भिज्ज स्वेद जानि कदाचन ।
येन हिंसन्ति भूतानि शुद्धात्मानादयापरा ॥
वाराह पुराणे १३० अ ५१२ पृ०

अर्थ—मनुष्य, गाय, भैंस, बकरी वगैरह और अण्डज अर्थात् सब प्रकार के पक्षी आदि अण्ड से पैदा होनेवाले, उद्भिज्ज यानी वनस्पति आदि, स्वेदज अर्थात् पसीने से पैदा होनेवाले खटमल मच्छर आदि समस्त जन्तुओं की जो पुरुष हिंसा नहीं करते हैं, वे ही शुद्धात्मा और दया परायण सर्वोत्तम हैं।

सर्व यज्ञान् तत् कुर्यु सर्व यज्ञाश्च भारत !
सर्व तीर्थाभिषेकाश्च यत् कुर्यात् प्राणिनां दया ॥

अर्थ—हे अर्जुन ! जो प्राणियों की दया फल करती है, वह फल चारों वेद नहीं कर और न समस्त यज्ञ करते हैं तथा सब तीर्थों के स्नान करने भी यह फल नहीं कर सकते हैं।

मातृवत्परदाराणि परद्रव्याणि लोष्टवत्।
आत्मवत् सर्वभूतानि यः पश्यति स पश्यति ॥१७॥ मत्स्य पुराण

अर्थ—जो पुरुष पर-स्त्री को मातावत् देखे और पर-द्रव्य को लोहे के माफिक समझे और सब जीवमात्र को अपने माफिक देखे है, सो ही देखनेवाला है, शेष अन्धे हैं।

अमेध्यमध्ये कीटाश्च सुरेन्द्राश्च सुरालये।
समाना जीवितव्येषु सम मृत्यु भय द्वयो ॥ १८ ॥ मत्स्य पुराण

अर्थ—विष्ठा के बीच में कीड़े स्वर्गों में इन्द्र और इन यह जीवन करि समान है इन दोनों को मृत्यु का भय समान है ॥ १८ ॥

अहिंसा सत्यमस्तेय त्यागो मैथुन वर्जनम्।
पंचैतेषु धर्मेषु, सर्व धर्मा प्रतिष्ठिता ॥ १ ॥
अहिंसा लक्षणो धर्म, स्व धर्म प्राणिहिंसन।
तस्माद्धर्मार्थिभिर्लोके कर्त्तव्या प्राणिना दया ॥ २ ॥
कथमुत्पद्यते धर्म कथं धर्मो विवर्द्धते।
कथं च स्थीयते धर्म कथं धर्मो विनश्यति ॥ ३ ॥
सत्येनोत्पद्यते धर्मं दया दानै प्रवर्द्धते।
क्षमया स्थाप्यते धर्म क्रोधाल्लोभाद्विनश्यति ॥ ४ ॥
मृगामरकुणश्चादीन् येनतुनस्तहस्तिन।
पुत्रवत्परि रक्षन्ति, ते नरा स्वर्ग गामिन ॥ ५ ॥

सुवर्ण दान गोदानं भूमिदानान्यनेकशः ।
नोत्तमं प्राणदानेभ्य इत्युवाच परामरः ॥ ६ ॥
हेम धेनु धरादाना दातारः सुलभा भुवि ।
दुर्लभा पुरुषा लोकेषु प्राणि ष्व भयप्रदः ॥ ७ ॥
ये तेषामपि दानानां काले न क्षीयते फलम् ।
भीता भय प्रदानस्य क्षय एव न विद्यते ॥ ८ ॥
एकतो भयभीतस्य, प्राणिनः प्राण रक्षणम् ।
एकत काञ्चनो मेरुर्बहुरत्ना वसुन्धरा ॥ ६ ॥
यो दद्यात्काचन मेरु कृत्स्नां चैव वसुन्धराम् ।
एकस्य जीवितं दद्या न च तुल्यं युधिष्ठिर ॥ १० ॥

अर्थ—हिंसा नहीं करना, सत्य बोलना, चोरी नहीं करना, परिग्रह का त्याग—इन पांचों धर्मों में इन्द्रिय दमन गर्भित है ॥ १ ॥

जीव मात्र का प्राण पीड़न नहीं करना, सो धर्म है और प्राणियों को पीड़ा करना अधर्म है, इसलिए धर्म के चाहनेवाले पुरुष को सदा ही प्राणियों की दया करना कर्तव्य है ॥ २ ॥

प्रश्न—धर्म कैसे उत्पन्न होता है, धर्म कैसे बढ़ता है, धर्म स्थिर कैसे रहे और धर्म कैसे नष्ट होता है ? ॥ ३ ॥

उत्तर—धर्म सत्य बोलने से उत्पन्न होता है, दया और दान से धर्म बढ़ता है, क्षमा से धर्म स्थिर रहता है और क्रोध लोभ से धर्म नष्ट होता है ॥ ४ ॥

जूँ, खटमल, डांस आदि जीवों को और अन्य, हाथी आदि को जो पुत्र की तरह रक्षा करते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं ॥ ५ ॥

सुवर्ण-दान गो-दान अनेक भूमि-दान, प्राण-दान से उत्तम नहीं

है, ऐसा पराशर ऋषि ने कहा है ॥७॥ पृथ्वी में सुवर्ण-दान, गो-दान, भूमि दान वगैरह के दातार बहुत हैं, परन्तु जीवों को अभय-दान देवे, ऐसा पुरुष दुर्लभ है ॥७॥ यह दानों का फल काल पाकर नष्ट हो जाता है, पर भयभीतों को अभय-दान देने का फल कभी नष्ट नहीं होता है ॥८॥ एक भयसे दुःखी जीव का भय मिटाना एक तरफ ही और सुवर्ण का मेरु और बहुत रत्नों की राशिवाली पृथ्वी का दान एक तरफ हो ॥९॥ सुवर्ण मेरु और समस्त पृथ्वी का दान करना और एक जीव को बचाना, हे राजा युधिष्ठिर ! ये बराबर नहीं होते हैं ॥ १० ॥

यथा मम प्रिया प्राणास्तथैवान्यस्य देहिनः ।
इतिमत्वान कर्त्तव्यो घोर प्राण वधो बुधैः ॥ १६ ॥

अर्थ जैसे मेरे प्राण मुझे प्यारे हैं वैसे ही और को अपने प्राण प्यारे हैं, ऐसा समझ कर ज्ञानी पुरुष कभी भी किसी का प्राण वध न करें ॥ १६ ॥

सप्तव्यसनों की व्याख्या और उनका फल

द्यूतं च मांसं च सुरा च वेश्या पापर्द्धि चौर्यं परदार सेवा ।
एतानि सप्त व्यसनानि लोके घोरातिघोरं नरकं नयन्ति ॥

अर्थ—जुआ, मांसाहार, सुरापान, वेश्यागमन, शिकार, चोरी, और परदारा गमन—ये सात व्यसन हैं मनुष्यों को घोर नरक को प्राप्त कराते हैं।

बौद्ध धर्म में भी हिंसा एवं मांसादि का निषेध है

मज्झिमनिकाय (सुल्लेख सुत्त)

पाणाति पातिस्य पुरिप पुग्गलस्य, पाणाति पात वेरमणी होवी परिनिव्वानाय।

अर्थ—जो प्राणी हिंसा करता है उसका हिंसा से विरक्त होना निर्वाण के लिए है।

प्राणातिपात वेरमणी कुसल (मज्झिमनिकाय ममादिठि सुत्त)

अर्थ—प्राणियों की हिंसा से विरक्त होना हितकारी है।

अगुत्तर निकाय ५।१।७

पञ्चइमा भिक्खवे वणिज उपासकेन अकरणीआ कतमे पञ्च सत्थ वाणिज्जा सत्त वणिज्जा मंस वणिज्जा मज्ज वणिज्जा विस वणिज्जा।

अर्थ—भगवान बुद्ध कहते हैं कि बौद्ध उपासकों को मांस मदिरा विष, सजीव प्राणी आदि इन पांच प्रकार के व्यापार करने का निषेध है।

गोरस माममध्ये तुमुद्गादिषु तथैव च।
भक्षमाण कृत नून, मांसतुल्य युधिष्ठिर ॥ ५८ ॥ स्कन्द पुराण

अर्थ—मांस तथा मूँग आदि द्विदलाओं के साथ दुग्ध गोरस का सेवन नहीं करना चाहिये, यदि इनके साथ भी गोरस का सेवन किया तो हे युधिष्ठिर ! समझना चाहिये कि मांस ही खाया है।

द्विदल मधु तैल च, गरिष्ठान्न तथैव।
भावदुष्ट पर्युषित जह्यान्नित्यव्रतानुवर्ती ॥ ४६ ॥

श्रीमद् भागवत महापुराण अध्याय ७ श्लोक ४६

अर्थ—व्रती को चाहिये कि वह द्विदल, मधु, तैल, गरिष्ठ अन्न तथा भावदुष्ट और बासी चीज को नहीं खावें।

लङ्कावतार सूत्र अध्याय ७

साधु गृहस्थों को कोई भी मछली या अन्य पशु का मांस खाना निषेध है।

धम्मपद (बुद्ध वग्गो)

मत्तञ्जुता च भत्तस्मि पन्तञ्च सयनासनम् ।
अधिचित्ते च आयोगो एतं बुद्धान सासनम ॥

निन्दा न करना हिंसा न करना संयम रखना मित भोजन करना, एकान्तवास करना, चित्त में योग लगाना, यह बुद्धों की शिक्षा है।

(सुत्तनिपात)

मुसलमान मत में हिंसा और मांस का निषेध

हजारों रमजान रोजे रखे, खुदा की याद में हजारों रात जागे और हजार सजदे करने और एक एक सजदे में हजार बार नमाज पढ़ने को भी खुदा स्वीकार नहीं करेगा यदि तुमने किसी निर्बल का हृदय दुखाया।

मौलाना रूमी

जब मुंह का एक दांत निकालने से मनुष्य को अत्यन्त पीड़ा होती है तो विचार करो कि उस जीव का कितना कष्ट होता है जिसके शरीर से उसकी प्यारी जान निकाली जावे।

[illegible] गाजी

चींटी को भी अपनी जान इतनी ही प्यारी है, जितनी हमें, इसलिए छोटे से छोटे प्राणी को भी कष्ट देना उचित नहीं है।

निजामी

शराब पी, कुरान शरीफ को जला, काबा को आग लगा, बुतखाने में रह, लेकिन किसी भी जीव का दिल न दुखा।

हाफिज शीराजी

कुरान शरीफ ७।८

खुदा जुल्म करनेवाले को नहीं चाहता।

। ३३

किसी भी जीव को उसकी ताकत से अधिक तकलीफ [illegible]

८।८०

मानव को अपने भोजन पर ध्यान देना चाहिए। हम (खुदा) ने तुम्हारे लिए शाक, भाजी फल, मेवा, अन्नादि सब कुछ पैदा किया है।

कुरान ६।३८

जो कोई अन्य प्राणियों के ऊपर दया का व्यवहार करता है, अल्हा उन पर प्यार करता है। आपनी हमदर्दी पृ० ५०६ ७

मांस दरख्त में नहीं लगता, जमीन में नहीं उगता, बल्कि जानवरों के बदन पर कट कर जुदा होता है, तब उसे दर्द होता है, अगर इन्सान हो तो दर्द होना चाहिये, खुदा ने हजारों न्यामतें दी हैं, खाओ, पीओ और मजे से रहो।

खुदा को प्राणियों का मांस या खून स्वीकार नहीं है।

कुरान शरीफ आयत ८८

ए इमानवालो ! तुम शिकार मत खेलो ॥ ८८ सुरा ॥

जल सोम रात, जरकार भक्षा।

८ ८ सुरा माइदाह पारा आयात राम अपाक १२

खुदा ने तुम लोगों को रजक के लिए मेवा व फल अता किया है।

ऐ मोमीनो ! सुथरी चीजों को खाओ जिससे तुमको फायदा हो, शरीर को नुकसान न हो और न तुम्हारी रियाजत व इबादत में फितूर आवे।

दरअसल शराब, शिकार, जुआ तीनों शैतान के बरगलाने के काम हैं। इन्हें छोड़ो कि जिससे तुम फूलो और फलो। थोड़े से स्वाद के लिए जान जाया (नाश) करना बड़ी बेअक्ली है।

मपा जोर मन्दी मस्त नक्के हा।
कि नरयक निम वमो नमा जद जहा ॥ आलमगीर

अर्थ—धीमे चलो, बल्कि चलो ही नहीं, क्योंकि तुम्हारे कदम के नीचे आकर हजारों जानवर मरते हैं।

ईसाई धर्म में भी हिंसा एवं मांस का निषेध

१० आज्ञायें

Do not kill and don't injure to anyone Go & learn what this meaneth I desire mercy and not Sacrifice

अर्थ—मारो नहीं और किसी को दुःख मत करो, जाओ और जाकर सीखो मैं दया चाहता हूँ, बलिदान नहीं।

मत्ती की इंजील बाब ५ आयात १९

जो कोई तेरे दाहिने गाल पर तमाचा मारे तो उसकी ओर बायां गाल कर दे।

हत्या न कर, मैथुन न कर (मत्ती बाब १९ आयात १८) यदि तुम उसका अर्थ जानते हो कि मैं कुर्बानी नहीं, किन्तु दया पसन्द करता हूँ तो निरपराधी जीवों को अपराधी न ठहराना। (मत्ती बाब १२ आयात ७)

(कुरिन्थि प्रकरण ११)

तू मेरी ओर पवित्रता से रह, निष्कारण किसी भी पशु को मार कर उसका मांस मत खा। (इन्जील पृष्ठ)

St Matthew ७

खुदा कुर्बानी को नहीं बल्कि रहम चाहता है।

St Solomon

धर्मात्मा व्यक्ति अपने पशुओं की रक्षा का भी ध्यान रखता है।

Poet Wordsworth (Pleasure of life)

Do not mingle thy pleasure or thy joy with the sorrow of the meanest that feels

ऐसे किसी भी कार्य में सुख और आनन्द मत समझो जिसमें किसी भी प्राणी को दुःख हो।

Gensis Chep 1 P -६७

Behold I have given you every herb bearing seeds which is upon the face of all the earth and every tree in which is the fruit of a tree yielding seeds to you each that before meat

मैंने तुम्हारे लिए जमी बूँटियां, फलदार वृक्ष और बीज पैदा किये है कि वे तुम्हें मास का काम दें सकें।

सण्ट मूर

तुम्हें हत्या नहीं करनी चाहिए नि सन्देह वे पुण्यात्मा है, जो पृथ्वी से उपजे हुए फलों को खाते हैं।

— अन्तिम प्रार्थना —

पक्षपात निर्निर्मुक्ता मन्ये धर्मानुरञ्जका ।
ये जीवास्तत्प्रशस्त्यर्थं श्रमायश्चरतो नह ॥
म० तुसी

— सन्त वाणी —

सन्त नारायण

दोहा—धिक् धिक् ऐसो धर्म जो, हिंसा करत विधान।
धिक् धिक् ऐसा स्वर्ग जो, नर करि मिलत महान् ॥१॥

शास्त्रन को सिद्धान्त यह, पुण्य जु पर उपकार।
पर पीड़न सों पाप बहु, बढ़िके नहिं संसार॥ २॥

महात्मा कबीर

दोहा—मांस अहारी मानई, प्रत्यक्ष राक्षस जान।
ताकी संगति मति करै, होइ भक्ति में हान॥ ३॥
मांस खाय ते ढेढ सब, मद पीवै सो नीच।
कुल की दुर्मति पर हरै, राम कहै सो ऊंच॥ ४॥
मांस मछलिया खात हैं, सुरापान से हेत।
ते नर नरकै जाहिंगे, माता पिता समेत॥ ५॥
मांस मांस सब एक है, मुरगी हिरणी गाय।
आंखि देखि नर खात हैं, ते नर नरकहिं जाय॥ ६॥
तिल भर मछली खायके, कोटि गऊ दै दान।
काशी करवट लै मरै, तौ भी नरक निदान॥ ७॥
बकरी पाती खात है, ताकी काढ़ी खाल।
जो बकरी को खात है, तिनका कौन हवाल॥ ८॥
सर जीव काटि निर्जीव पूजै, अन्तकाल कों भारी।
हिंसा कर जीवधर्म मनावत, मानव की बलिहारी॥ ९॥
जहां दया तहां धर्म है, जहां लोभ तहां पाप।
जहां क्रोध तहां काल है, जहां क्षमा तहां आप॥ १०॥
निर्बल नाहि सताइये, जाकी मोटी हाय।
मुई खाल की फूंक से, सार भसम हो जाय॥ ११॥

भग माछली सुरापान, जो जो प्राणी खाय।
व्रत नम जेते किये, सबही रसातल जाय ॥१२॥

गुरु नानक

ज रत लगे कपड, जामा होय पलीत।
जो रत पीवे मानमा, तिन क्यूं निर्मल चित ॥१३॥
दुर्मति मद जा पीवते, विष लिपत कमली।
नाम रसायन जो रते, नानक मच अमली ॥१४॥
जो शिर काटे और का, अपना रह कटाये।
धीरे धीरे नानका, बदला कहीं न जाये ॥१५॥
जो बीजे सो उगमी, कभू न होये हान।
समय पाय फल दत है, नानक निश्चय जान ॥१६॥
रोजा धरे मनावे अल्ला, स्वादत जीव सघारे।
आपा देख अवर नहीं देख, काही को जस मारे ॥१७॥
बेद कतेब कहो मत झुठे, झुठा जो न विचार।
सो मनम जक खुदाई कहत हो, तो क्यों मुरगी मारे ॥१८॥
अठमठ तीरथ सकल पुन, जीव दया परधान।
जिसनूं दया दस दया कर, सो पुरष सुजान ॥१९॥

मौलाना रूमी

खुदी न कर ओ खुदा के वन्द, खुदी है जबतक खुदा नहीं है।
खुदी जो वन्द तन अगर तो, खुदा से फिर तूं जुदा नहीं है॥
जब कहा मैंन या अल्हा, मेरा हाल देख।
हुक्म होता है कि अपना, नाम ये अमाल द॥

श्री तुलसीदासजी

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छाँडिये, जब लग घट में प्रान॥
तुलसी दया न पारकी, दया आपकी होय।
तू नहीं मारे अवर को, तो तुझे न मारे कोय॥
सुख दुःख नहिं कोउ जन्तु सु दाता।
निज कृत कर्म भोगता सब भ्राता॥

ब्रह्मचर्य के बारे में दो शब्द

जब देश में ब्रह्मचर्य का पूर्ण प्रचार था तब यहां न तो इतनी व्याधियाँ थीं और न युवा अवस्था में प्रायः कोई मरता ही था परन्तु आज की दशा उससे सर्वथा विपरीत है। हमने जीवन के मूल ब्रह्मचर्य को छोड़ दिया इसी से हमारी गिरी हुई अवस्था हो गई जिस प्रकार कच्ची नींव पर इमारत नहीं टिक सकती यदि बनाई जाती है तो वह इतनी कमजोर होती है कि जरा से धक्के से गिर जाती है इसी प्रकार ब्रह्मचर्य के बिना जीवन नहीं टिक सकता है यदि कभी कुछ रहता है तो वह रोग ग्रस्त मरा हुआ रहता है सो भी व्यवहार के लिये ही समझना चाहिये।

शरीर में ओजस धातु का होना ही जीवन का कारण है। भोजन का सबसे पहिले रस बनता है रस से रुधिर रुधिर से माँस माँस से मेद मेद से हड्डी हड्डी से मज्जा मज्जा से वीर्य बनता है। यही वीर्य ओजस रूप सफल तेज बन कर सम्पूर्ण शरीर में चमकने लगता है यही बल तथा पुष्टि का केन्द्र बनता है। यह सात पदार्थ स्वयं स्थिर रह कर मनुष्य की देह का धारण करते हैं। इसी से इसका नाम धातु है।

एक धातु से पक कर दूसरा धातु बनने में पाँच दिन लगते हैं भोजन के सूक्ष्म सूक्ष्म पदार्थ का रस शरीर में रम जाता है और पाचन की प्रत्येक क्रिया में बचा हुआ कूड़ा करकट मल मूत्र पसीना मैल नाखून और बाल आदि के रूप में निकल जाता है। धातु बनने की उसकी पाचन क्रिया रुक जाती है और वह

सार पदार्थ आत्मा के रूप में शरीर में स्थित रहता है और इस प्रकार रस से लेकर वीर्य बनने में प्रत्येक धातु में पाँच दिन के हिसाब से छः धातुओं के पाचन में तीस दिन लगते हैं। आज के खाये हुये पदार्थ का तीसवें दिन वीर्य बनता है। पक्के चालीस सेर भोजन से एक सेर रक्त बनता है और उस एक सेर रुधिर से दो तोला वीर्य बनता है। प्रतिदिन पक्का एक सेर खानेवाला मनुष्य भी एक महीने में तीस सेर ही पदार्थ खाता है। इसलिए हिसाब से तीस सेर खुराक से एक महीने में डेढ़ तोला वीर्य बनता है यही महीने भर की कमाई है। एक बार के स्त्री प्रसंग में डेढ़ तोले से कम वीर्य नहीं जाता। अब विचार करना चाहिये कि जो महीने भर की कमाई एक क्षण में खो देता है और उसे प्रतिदिन इसी प्रकार खोना चाहता है उसका दिवाला निकलने में क्या देर लगती है?

जैसे दूध में से मक्खन निकालने में दूध को मथना और ईख में से रस निकालने में ईख को निचोड़ना पड़ता है वैसे ही एक बूँद वीर्य को निकालने में सारे शरीर को मथना या निचोड़ डालना पड़ता है। घृत के निकालने के बाद दूध सार हीन निस्तेज और छाछ का रूप खारा और चूरचूर हो जाता है वैसे ही वीर्य के निकलने से शरीर भी सार हीन निस्तेज खोखला और चूरचूर हो जाता है। शरीर की तमाम नाड़ियाँ ढीली पड़ जाती हैं और प्रत्येक हिस्से में उदासी छा जाती है। वीर्य के पतन में ही मनुष्य का पतन है और वीर्य के धारण में ही मनुष्य का जीवन है वीर्य धारण को ही ब्रह्मचर्य कहते हैं। ब्रह्मचर्य ही सारे पुरुषार्थों का मूल है इससे मनुष्य सदा नीरोग और सुखी रहता है। इसी से अकाल जरा और मृत्यु से रक्षा होती है इसी से हृष्ट पुष्ट बलिष्ठ और धर्म परायण सन्तान उत्पन्न होती है इसी से मनुष्य दीर्घ जीवी स्मृति सम्पन्न सत्यवादी जितेन्द्रिय और धर्म निष्ठ होता है इसी से भजन और ध्यान की योग्यता प्राप्त होती है इसी से योग के साधनों में रुचि और सिद्धि प्राप्त होती है। इसी से मनुष्य निर्भय और निष्काम होकर जगत की सेवा कर सकता है और इसी के बल से अन्त में परमात्मा तत्व को भी प्राप्त कर सकता है, यही सब प्रथम परम साधन है।

वीर्यनाश और उससे हानि

वीर्य का नाश मैथुन से होता है। (१) किसी स्त्री का किसी अवस्था में स्मरण करना (२) उसके गुणों व रूप का वर्णन करना स्त्री सम्बन्धी चर्चा करना

...त गाना, शृङ्गार रस के ग्रन्थों का पढ़ना आदि ( ) स्त्रियों के साथ ताश ...ड़ आदि खेलना (४) स्त्रियों को बुरी दृष्टि से देखना (५) स्त्री से एकान्त में ...त करना (६) स्त्री को प्राप्त करने के लिये मन में सङ्कल्प करना, (७) स्त्री की ...त करने के लिये प्रयत्न करना और (८) प्रत्यक्ष सहवास करना—ये आठ प्रकार के ...न विद्वानों ने बतलाये हैं। मोक्ष की कामनावालों को इन आठों से अवश्य ...ना चाहिये। बहुत से लोग होली के अवसर पर भौजाई, भाभी, साले की स्त्री ...र पत्नी या पड़ोसिनों के साथ फाग खेला करते हैं इसको भी एक प्रकार ...ा मैथुन समझना चाहिये। सब स्त्री पुरुषों को इस पापाचार से अवश्य बचना ...हिये। पर स्त्री के साथ तो मैथुन करना सर्वथा निषेध है ही परन्तु अपनी स्त्री ...ह साथ भी इन आठ प्रकार के मैथुनों से मुमुक्षुओं को बचना चाहिये स्त्री के किसी ...कार के सम्बन्ध से भी वीर्य नाश होता है। प्रत्यक्ष सहवास के अतिरिक्त अन्य प्रकार के मैथुनों में वीर्य स्खलित होकर अण्ड कोषों में आ ठहरता है जिससे धातु दौर्बल्य, स्नायु विकार, प्रमेह, मूत्र कृच्छ्र, यक्ष्मा आदि अनेक प्रकार की बीमारियाँ हो जाती हैं। आजकल की सभ्यता में तो मैथुन के और भी अनेक अनर्गल उपायों का आविष्कार हुआ जिनसे प्रत्यक्ष सहवास के समान ही भीषणता के साथ वीर्य नाश होता है और यह पापाचार उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है फल ...भी हाथों हाथ मिल रहा है मन और शरीर दुर्बल हो जाता है गाल पिचक जाते हैं चश्मा पहनना पड़ जाता है स्मरण शक्ति जाती रहती है मस्तक में चक्कर आने लगते हैं हृदय कमजोर हो जाता है आँखें अन्दर धँस जाती हैं क्षुधा मारी ...हो जाती है जी घबड़ाता है सुख से नींद नहीं आती है और अजीर्ण घेरे रहता है। सारांश यह है कि—शरीर रोगों का समुद्र बन जाता है। और आयुर्वेद शास्त्र में अर्श, पाण्डु, रक्त पित्त, राजयक्ष्मा, सन्निपात, मूर्च्छा, दाह, अग्निमान्द्य और वात आदि रोगों का कारण वीर्य का अधिक नाश होना ही बतलाया है। पाश्चात्य डाक्टरों का भी मत है। ऐसी अवस्था में मनन ध्यान तो ...हो ही कैसे सकते हैं? अतएव प्रत्येक सुख के इच्छुक मनुष्य को चाहिये कि वह स्वयं ब्रह्मचर्य का पालन करें और अपनी सन्तति से करावें। माता पिता का कर्तव्य है कि वे गर्भाधान काल में ही बड़ी सावधानी के साथ बालक का ...न का उपाय करें। जब गर्भ ...जीवन से ब्रह्मचर्य के प्रताप

हो तब माता पिता कभी किसी प्रकार की गन्दी बातें न करें, बुरे उपन्यास-नाटक न पढ़ें। न बुरे नाटक सिनेमा देखें, शृङ्गार के तथा अश्लील चित्र न देखें, धर्म शास्त्र का अध्ययन करें, भक्त और धार्मिक वीर गाथाएँ सुनें और पढ़ें। गर्भ काल में माता का जैसा आचरण होता है वैसी ही उसकी सन्तान बनती है। इस बात को प्राच्य और पाश्चात्य सभी विज्ञान वेत्ताओं ने स्वीकार किया है।

आजकल के स्कूल कालेजों की तो बड़ी ही बुरी दशा है। सौभाग्य वश शायद ही कोई ऐसा स्कूल या कालेज होगा जहाँ बालक दुराचरण न करते हों। बड़े ही खेद का विषय है कि भारत के भावी आशाओं भारत जननी के प्रिय बालकों की जीवन शक्ति शिक्षा नाम पर बुरी तरह से नष्ट हो रही है। प्रथम तो पाश्चात्य शिक्षा का विषैला रंग ही बालक को अपने धर्म से गिरा देता है। दूसरे आजकल के स्कूल कालेजों का विषय प्रधान बिगड़ा हुआ वातावरण उनके जीवन की प्राय समस्त शक्ति का विगाड़ देता है। हमारी जाति के जीवन में यह एक बड़ा भारी घुन लग गया है। यदि इससे रक्षा न हुई तो बड़ा अनर्थ हो जाने की आशंका है।

'सिनेमा की बदी'

वर्तमान काल में जो सिनेमा नाटक आदि अतिशय आसक्ति से देखा जाता है वह काम विषयक तीव्र अभिलाषा प्रकट करने का साधन है। इससे ब्रह्मचर्य को जो गहरा धक्का लग कर जनता के स्वास्थ्य और सदाचार को गहरी हानि पहुँचाती है और उत्तरोत्तर अनाचार की वृद्धि में सहायता मिलती है क्योंकि सिनेमाओं का अधिकतर प्रयोजन चित्त को विचलित करना होता है जिससे जनता अन्धी होकर पतंगों की तरह उनके जाल में फँसती रहती है। इससे राष्ट्र, देश, जाति की जो हानि हो रही है वह अवर्णनीय है। अतः प्रत्येक माता पिता का कर्तव्य है कि वह स्वयं उनसे बचे और अपने बाल-बच्चों को इस अगम प्रवृत्ति से रोके अन्यथा उनका कड़ुआ फल भावी सन्तान को भोगना ही पड़ेगा।

ब्रह्मचर्य रक्षा के उपाय

(१) बाल विवाह का सर्वथा त्याग, कम से कम अठारह वर्ष से

पहले लड़के का और चौदह वर्ष से पहले लड़की का विवाह भूल कर भी नहीं करना चाहिये।

वृद्ध विवाह कभी न होने देना चाहिये।

(३) ब्रह्मचर्याश्रमों की स्थापना करनी चाहिये, जिनमें बालकों के ब्रह्मचर्य की रक्षा का बड़ा कड़ा प्रबन्ध होने के साथ ही उन्हें धर्म पूर्वक ब्रह्मचर्य की शिक्षा भी दी जाय। कम से कम अठारह साल की उम्र तक बालकों का उसमें रहना अनिवार्य हो।

४) लड़के लड़कियों की सगाई पहले न की जाय।

) बालक बालिकाओं को भड़कीले कपड़े और गहने बिल्कुल ही न पहनायें जाय।

) शृङ्गार रसके संस्कृत या हिन्दी काव्य या नाटक उपन्यासादि ग्रन्थों का प्रचार यथासाध्य रोका जाय। कम से कम छोटी उम्र के बालक, बालिकाओं के हाथ में ऐसी पुस्तकें कभी न दी जायें और न विद्यार्थियों को साहित्य की दृष्टि से ही ऐसे ग्रन्थ पढ़ाये जाय।

) शृङ्गार रस प्रधान नाटक सिनेमा कभी न देखे जायें, कमसे कम बालक, बालिकाओं को कभी न दिखलायें जाय।

) उत्तेजक पदार्थ न खाने चाहिये। मिर्च गर्म मसाले तेल अचार खटाई, अधिक मीठा और अधिक गर्म चीज न खाई जाय। भोजन खूब चबाकर खाया जाये, सादा सब्जी सादा ताजा और नियमित समय पर किया जाय, किसी भी मादक, नशीली वस्तु का सेवन न किया जाय।

(९) यथा साध्य नित्य गुली हवा में प्रतिदिन सवेरे सन्ध्या पैदल घूमा जाय।

(१०) रात को जल्दी सोया जाय और प्रात काल ब्रह्म मुहूर्त में यथा सूर्योदय से कम से कम एक घण्टा पहले अवश्य उठा जाय। सोते समय पेशाब करके हाथ पाव धोकर के सोवें। स्त्री और पुरुष एक पलंग पर या एक साथ कभी न सोवें। रात को भगवान का चिन्तन करें।

(११) कुसंगति सर्वथा त्याग दी जाय। स्त्री सम्बन्धी चर्चा कभी न की जाय। इस प्रकार स्त्री भी पुरुष चिंतन का त्याग करें।

(१२) दम्पति (विवाहित स्त्री पुरुष) को छोड़ कर अकेले में दूसरे स्त्री पुरुष कभी न बैठे और न एकान्त में बात चीत करें।

(१३) स्त्रियों की ओर कभी न देखें, यदि दृष्टि जाय तो तुरन्त मातृभाव कर लें।

(१४) नित्य सत्सग किया जाय। सद् ग्रन्थों का अध्ययन किया जाय विषय रूपाय निवृत्ति रूप ग्रन्थों का स्वाध्याय हो।

(१५) शौकीनी वस्तु सर्वथा त्याग दी जाय। यह स्मरण रखना चाहिये कि सजावट और शृङ्गार से काम वासना जागृत होती है। शृङ्गार वास्तव में इसलिये किया ही जाता है कि मै दूसरों को सुन्दर दिखाई दू। शृङ्गार करनेवाला स्वयं डूबता है और दूसरों को डुबोता है।

(१६) इत्र फुलेल कभी न लगाया जाय, फैशन से न रहें चटक-मटक छोड दी जाय। बाल न रखे जाय, बार-बार दर्पण में शौक करते मुख न देखा जाय, ओठों को लाल करने के लिये

पान न खाया जाय, आसव आदि का सेवन न किया जाय, उत्तेजक औषधियों का सेवन न किया जाय।

) मूत्र त्याग और मल त्याग के बाद इन्द्रियों को शीतल जल से धो डाले। मल मूत्र की हाजत न रोके।

) यथा साध्य ठण्डे जल से नित्य स्नान किया करे।

) नियमित व्यायाम करे, हो सके तो नित्य कुछ आसन और प्राणायाम का अभ्यास भी किया करे।

) कौपीन या लंगोट अवश्य रखा जाय।

) भगवान की मूर्ति का प्रेमपूर्वक दर्शन करे। सन्त साधुओं और महापुरुषों की मन लगा कर सेवा करे।

) प्रतिदिन नियमित रूप से सत्य शास्त्रों का स्वाध्याय करना चाहिये।

) व्यभिचारी (दुशील) एवं शराबी पुरुषों की संगति न करे, वैराग्य की भावना बढ़े ऐसे साधुओं की संगति करना ही उत्तम है।

) महापुरुषों के चरित्र का वर्णन करे, महीने में कम से कम चार उपवास करे।

) भूल कर स्त्रियों के सहवास में न रहे एवं जहां स्त्रियां एकत्र होकर राग भाव रूप गान करती हों, ऐसे मेले में न जाय, स्त्रियों के मनोहर अङ्ग को न देखे, प्रेम भावपूर्वक स्त्रियों से वार्तालाप न करे, स्त्रियों के नृत्य, गायन आदि न देखे न सुने।

) पूर्व काल में भोगे हुए भोगों को याद न करे।

) कामोद्दीपक गरिष्ठ आहार भर पेट भोजन न करे, शरीर को मल मल कर स्नान न करे, मन वचन, काय से काम विकार

रूप चेष्टा न करे। पलङ्ग पर या कोमल बिस्तर पर न सोवें किसी की हँसी दिल्लगी न करे।

(१८) नीच स्थान लेकर के बीच को न छोड़, जहां तक होवे कपड़े अपने हाथों से धुलाई करे।

(९) उदासीनतापूर्वक अल्प आरम्भ करे। विशेष परिग्रह बढ़ाने की चेष्टा न करे।

( ) ... हथिनी घोड़ी, ऊंटनी आदि पर न बैठे

( ) होली न खेले, उससे परिणाम मलीन होता है, ब्रह्म... मलिन होता है।

( ) ... आहार जल ले लेना चाहिये

मुमुक्षुओं के दिन चर्या की भावना

मुमुक्षु जिस समय में कोई कार्य करता हो, उस समय ... उत्तम भावना का लक्ष्य उस कार्य के अनुसार बनाना चाहिये, क्योंकि उत्तम भावना का चितवन आत्मा को परम्परा महान उपकारी होता है। यथार्थ में देखने में आवे तो भावना पर ही जीव संसार और मोक्ष का निर्माण हो सकता है, इसलिये संक्षेप में ... कुछ लिखा जाता है।

१—प्रातःकाल उठ कर मलमूत्र की बाधा से निवृत्त होकर ऐसा विचार करना चाहिये कि जिस प्रकार शरीर की बाधा दूर होने से सुख मालूम होता है, उस प्रकार उससे अनन्त गुणा सुख क्रोध राग द्वेष मोह रूपी भावों की बाधा से निवृत्ति करूँगा तब ही मुझे आत्मिक शान्ति मिलेगी। धन्य है वह दिन कि जिस दिन मैं अशुचि भण्डार रूप शरीर से मोह छोड़ कर इस शरीर द्वारा सत्धर्म

(तप आदि) में लग जाऊँगा, तब ही मुझ मनुष्य को सुख की प्राप्ति हो सकती है।

२—दांतुन करते समय जिस प्रकार मुख को साफ करता हूँ, उस प्रकार से आत्मा को स्वच्छ करूँगा वह दिन धन्य होगा—जैसे मुख को स्वच्छ करते हुये आनन्द होता है, वैसे ही आत्मा के अनन्त गुणों की अशुद्धता को स्वच्छ करूँगा, तब आनन्द होगा।

३—स्नान करते समय ऐसा विचार करे कि—जैसे शरीर का मल दूर करता हूँ, वैसे विषय कषाय आदि आत्मा का अन्तरङ्ग मैल कब मैं दूर करूँगा, वह दिन की घड़ी धन्य होगी।

४—कपड़ा पहनते समय ऐसा विचार करे कि जिस प्रकार शरीर की रक्षा आवरण से और उसकी शोभा वस्त्राभूषण से करता हूँ, उस प्रकार आत्मा की रक्षा क्षमा आदि से और शोभा ज्ञान ध्यान से करूँगा, वह दिन की घड़ी धन्य होगी।

५—रसोई करते समय ऐसा विचार करे कि—जिस प्रकार शरीर की स्थिति टिकाने के लिये भोजन करता है, उस प्रकार आत्मा को स्थिर करने के लिये ज्ञान रूपी अमृत का भोजन जिस दिन करूँगा, वह दिन की घड़ी धन्य होगी।

६—जिस प्रकार रसोई बनाने में सावधानीपूर्वक (निरीक्षण से) मैं शुद्ध भाव से करता हूँ ऐसी रसोई यदि अन्य पुरुष द्वारा कराने से होती नहीं है उस प्रकार पाप रूपी कार्य को बलात्कारपूर्वक मैं मेरे ज्ञान से नहीं हटा कर और अन्य के दोषों को देखने की दृष्टि को जहाँ तक मैं नहीं हटाऊँगा, वहाँ तक मुझे आत्म शान्ति की प्राप्ति नहीं होगी, ऐसी भावना का निरीक्षण जो दिन मुझे होगा, उस दिन की घड़ी धन्य होगी।

७—भोजन करते समय ऐसा विचार करे कि पदार्थ के स्वाद-स्वाद में अत्यन्त तन्मय होकर राग में फंसा हूँ इसलिये मुझे धिक्कार है, यथार्थ में जिस दिन राग का परिहार आत्मिक सुख के स्वाद में लीन होऊँगा, वे दिन की घटी धन्य है।

८—वस्त्र साफ करते समय ऐसा विचार करे कि—जिस प्रकार वस्त्र को साफ कर उजला करता हूँ, उस प्रकार मेरी आत्मा के मल को सम्यग् ज्ञान रूपी जल से और तप संयम आदि साधन से साफ कर शुद्ध करूँगा, वह दिन की घटी धन्य होगी।

९—घर में से जैसे—कूड़ा झाड़ू से बाहर निकाल कर घर को सुन्दर (स्वच्छ) करता हूँ, उसी प्रकार मेरे आत्मा-रूपी घर में रागादि-रूपी कूड़े को ज्ञान और ध्यान-रूपी झाड़ू से दूर कर आत्म रूपी घर को स्फटिक मणी जैसे सुन्दर करूँगा, वह दिन की घड़ी धन्य होगी।

१०—जिस प्रकार दुकान पर जाकर सावधानीपूर्वक नुकसान न हो, धन की प्राप्ति करने में लेन देन (व्यापार रोजगार) कर नफा होते ही खुश होता हूँ उसी प्रकार मेरी आत्मा का ज्ञानादि धन का सावधानीपूर्वक नुकसान नहीं हो और ज्ञानादि की प्राप्ति करने में शास्त्राभ्यास-रूप लेन देन कर ज्ञान की वृद्धि-रूपी नफा होने से खुश होऊँगा वे दिन की घड़ी धन्य होगी।

११—जिस प्रकार तिजोरी में रखा हुआ धन को मैं जहां तक सुपात्र दान ज्ञान उन्नति में नहीं लगाऊंगा, वे धन पत्थर के समान है, उस प्रकार मेरे ज्ञान रूपी धन को जहां तक मैं सच्चारित्र अर्थात् तप व्रत समिति गुप्ति में न लगाऊंगा, वहां तक वे ज्ञान पत्थर जैसा शुष्क ज्ञान से मेरा कोई कल्याण नहीं होगा।

१२—जिस प्रकार गोदाम में भरा हुआ माल की मैं सदा चिन्ता करता हूँ, उस प्रकार शरीर-रूपी गोदाम में चेतन रूपी रत्न के माल की चिन्ता करूँगा, वह दिन की घड़ी धन्य होगी।

१३—जिस प्रकार कोई मनुष्य अपना नफा नुकसान रूपी व्यापार रोजगार को निरीक्षण नहीं करता है वह निश्चय से दुःखी होकर हानि में चला जाता है, उस प्रकार जो कोई आत्मा अपने पुण्य पाप रूपी लाभ हानि का सदा निरीक्षण नहीं करता है, वे निश्चय से महान दुःखद जैसी नरक गति में चला जाता है।

१४—जिस प्रकार टैक्स की नोटिस मिलते ही मेरा खाता रात दिन मेहनत करके तैयार करता हूँ, उस प्रकार मौत के पैगाम रूप बुढ़ापे का नया माल की नोटिस मिलते हुवे भी मैं लेश मात्र भी आत्म कल्याण नहीं करता, इसलिये मुझे धिक्कार है।

१५—जिस प्रकार मैं मेरा सम्बन्धी कुटुम्ब कबीला, परिवार, धन, कीर्ति, मान, आदर, प्रतिष्ठा, वैभव भोगादि सामग्री की रात दिन चिन्ता करता हूँ, उस प्रकार मैं मेरा चैतन्य-रूपी खजाने की देखभाल करूँगा, वे दिन की घड़ी धन्य होगी।

१६—मैं पर दोष देखने में जितना प्रवीण हूँ, उतना मैं मेरा दोष देखने में प्रमादी हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है, जिस दिन मैं पर के गुणों को और अपने दोषों को देखूंगा, वे दिन की घड़ी धन्य होगी। हे भगवान ! इस प्रकार मेरी भावना का दिन मुझे शीघ्र प्राप्त हो इसलिये मैं आपके चरण में बार बार नमस्कार कर प्रार्थना करता हूँ, इस मोह रूपी गाड़ी का मैं स्वयं बैल बना हूँ और उसका वजन उठाते उठाते मैं थक गया हूँ, इसलिये तुम्हारी कृपा दृष्टि ही सतपथ का मार्ग बताने वाली हो, ऐसी भावना भाता हूँ।

पद्मासन अथवा पर्यङ्कासन करके

प्रात काल चार बजे उठ कर, हाथ, पाव, मुह को शुद्ध कर, शुद्ध वस्त्र पहन कर एक घण्टा ब्रह्म मुहूर्त मे आत्म चिन्तवन करना प्रत्येक स्त्री पुरुष का कर्तव्य है। पूर्व और उत्तर दिशा मे मुह करके निम्न प्रकार आत्म चिन्तवन करना चाहिए।

'सद्बोधामृत'

मेरे आत्मा से जो बाह्य पदार्थ है, वे कदापि भी मेरा नही है और न उनका कदापि था ही नहीं, फिर भी मैं मोह मे अज्ञानी होकर मान बैठा था, इसलिए तो मुझे दु ख रूपी सन्ताप का लाभ ही रहा अब मैं निश्चय से बुद्धिपूर्वक उन सब का सब छोड कर मोक्ष मार्ग मे निशङ्क होकर विचार करने का पुरुषार्थ करता हू अथवा मेरे आत्मा को मेरे आत्मा म स्थिर करता हू।

जो जीव अपने चित्त को एकाग्र कर ध्यान मे स्थिर करता है, वे जीव निश्चय से समाधि को प्राप्त होता है अथवा निज निर्मल ज्ञान दर्शनमयी आत्म भण्डार का अवलोकन करता है।

मेरी आत्मा सदा एक अविनाशी, निर्मल, अचल, केवलज्ञान रूप है और मेरा आत्मा से भिन्न सकल पदार्थ विनाशीक अस्थि सदा एक समान नहीं रहनेवाला अशुचि दु ख के कारण रूप होने से मैं उनका परित्याग करता हूँ। जो आत्मा सदा ध्यान योग से अपने अन्त करण को निर्मल कर शुद्ध चरित्र मे प्रयाण करता है, उसको इन्द्रियो के भोग कदापि पराजित नहीं कर सकते हैं।

जहा तक ससार मे भोगों की वाछा है, वहाँ तक मनुष्य को कदापि भी सुख नहीं हो सकता है, जितनी जितनी इच्छा बढ़ती

जाती है, त्यों-त्यों दुःखों का विस्तार बढ़ता चला जाता है, जैसे-जैसे इच्छा पूरी होती जाती है, वैसी-वैसी इच्छा विशेष तीव्र-रूप होती जाती है, जिसको दुःख से छूटना है, उसको अवश्य इच्छा का निरोध करना चाहिए अथवा दुःख को कमती करना हो तो इच्छा को कमती करो और इच्छा कमती करनी हों तो इच्छा की पूर्ण करने की इच्छा को त्याग करो, इच्छा-रूपी आग में विषय रूपी घी की आहुति न करो, किन्तु सन्तोष रूपी शीतल जल का सचय कर इच्छा को बुझानी चाहिए, "इच्छा निरोध तप" "तपसा निर्जरा च" श्रुति का वाक्य है और निर्जरा से ही सवर भाव बढ़ता है और सवर से ही शुद्ध आत्म तत्त्व की प्राप्ति होती है।

विषय सुख की निराशा होना, यही सच्चे सुख की प्राप्ति का उपाय है अथवा विषयों की चिन्ता छूटे बिना सच्चे सुख की प्राप्ति कभी सम्भव नहीं है, धन्य है वे महापुरुषों को जिसने स्वेच्छा से विषय सुख की चाह को त्याग किया है।

सब जीवोंमें प्रति प्रेम करो, दूसरों की निन्दा मत करो किन्तु दूसरे का गुण प्रकट करो, प्रिय हितमित वचन बोलो, सत्पुरुषों की सगती करो।

नीच और कुव्यसनों से सदा दूर रहो, धर्म की जड़ दया है और पाप की जड़ कुव्यसन है।

सब प्राणियों को अपने समान, पर धन पत्थर समान और पर-स्त्री माता समान समझो, विद्या आत्म ज्ञान के लिये, धन दान के लिए, और शक्ति दूसरे जीवों की रक्षा के लिये लगाना चाहिए। लक्ष्मी चञ्चल (अस्थिर) है, आयु पानी के बुल्बुले समान है, यौवन बिजली के चमत्कार समान है, इसलिये धर्म का शीघ्र धारण करो।

संसारी पदार्थों के संग्रह में दौड़ना छोड़ दो, संसारिक विषयों से विरक्त होकर आत्म-कल्याण के मार्ग का ग्रहण करो और निर्मल ध्यान से परिणाम में आगे बढ़ कर मोक्ष की प्राप्ति का पुरुषार्थ करो, सदा विनय और प्रेमपूर्वक सत्संग, सत्समागम करो, निर अभिमान दयालु हृदय, और नम्र वाणी से सबके साथ बर्ताव करो, आत्मा-परमात्मा में फर्क नहीं है तो फिर मनुष्य मनुष्य में तिरस्कार क्यों ? आत्म-धर्म में पंथ नहीं है तो सम्प्रदाय-रूपी बाड़ा (पंथ) क्या ? अन्य का तिरस्कार करना यह अपनी आत्मा का तिरस्कार करना है, उसे जीव ने आत्मा को पहचाना नहीं है।

दूसरे समय पाप न करने का निश्चय करना वे प्रायश्चित है, कान से बुरी बात मत सुनो, आँख से बुरी चीज मत देखो, मुख से खराब बात मत कहो, हाथ से खराब काम मत करो, पैर से खराब रास्ते मत जाओ, मन से खराब चिन्तवन मत करो, बुद्धि से खराब विचार मत करो, किन्तु सरिता की तरह दान शीलता, पृथ्वी की तरह सहन शीलता, सूर्य की तरह उदारता, वायु की तरह समानता, चन्द्र की तरह शीतलता, नभ की तरह नम्रता और गाय की तरह वात्सल्यता सीखो। बाह्य पदार्थ (धनादि) अपना शत्रु है, यह मन को चञ्चल करता है। इसलिए आध्यात्मिक धन की प्राप्ति करो, जिससे मन में शांति होवे।

जिस मनुष्य में काम वासना भरी है, वह कदापि शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता है। जिसने अपना मन और इन्द्रियों को वश किया है, वही आत्मा पर विजय प्राप्त कर सकता है। अभिमानी और लोभी कदापि शान्ति नहीं पा सकता है, तो मोक्ष वे कहां से ? अभिमानी जीव को सब दुश्मन

दिखाई देते हैं, क्योंकि उनका मान चाहिए और वह नहीं मिलने से क्षण-क्षण में क्रोध करता है, क्योंकि पर पदार्थ में उसका सदा निवास है। ज्ञानी वस्तु स्वरूप को जानता है, इसलिए अहङ्कार नहीं करता है। जीव क्यों अपने व्याधिक नाम और कीर्ति के लिए नीटवाम कर पाप बांधता है? जीवन तो बादल की छाया, पानी का बुदबुदा, बिजली की चमक समान क्षणभंगुर है फिर भी यह जीव नाम आदि के झगड़े में आत्मिक शान्ति का नाश करता है। नाम तो चक्रवर्ती का भी रहा नहीं है, तो तेरा क्या मूल्य है? जो वस्तु प्रति प्रथम प्रीति होती थी, उसके प्रति प्रीति रूप भाव का नहीं रहना उसका नाम वैराग्य है। वैराग्य की जननी विवेक सत्य का साधन है कि जो परम्परा मोक्ष का कारण है। शरीर व्याधियों की जड़ है, यह अपवित्र से भरा निन्दनीय है, यह एक क्षण भी बिना खबर किये नाश हो जाता है अथवा रोग क्षीण जरावस्था को प्राप्त होता है। मलमूत्र, रक्त पित्तादि दुर्गन्धित वस्तु से भरा पड़ा है। नाशवान है, प्राण निकल जाने के बाद लकड़ी के टुकड़े के समान बेकार भार-रूप है। नव द्वार से मल तथा पसीना सदा ही छोड़ता है, नाखून, केश बिना इच्छा के बढ़ते हैं एक क्षण भी आज्ञानुसार रहता नहीं है, देखभाल करते भी आँख, कान, दाँत आदि खराब हो जाते हैं। दाँत आने और जाने दोनों समय में दुःख देते हैं।

जो मूढ़ मनुष्य शरीर को साफ करता है, साबुन, इत्र, तेल, पाउडर आदि लगाता है, सदा सुन्दर बनाने की चेष्टा करता है, पकवान आदि का सुन्दर भोजन कराता है, नाटक सिनेमा आदि दिखाता है, मोटरगाड़ी में घुमाता है, सोना चाँदी, जवाहरात पहनाता है, रेशमी गरम मलमल, मखमल मुलायम कपड़ा भांति

का पहनाता है, परद्धाति मुलायम वस्तुओं मे सुलाता है, वस्त्र आभूषण से सजाता है, ठण्डा गर्म मसालेदार पिलाता है, दर्पण में देख कर नाच नचाता है, टीपटाप करके अपने को सुन्दर बनाने की चेष्टा एव मोह बढ़ाने का अत्यन्त प्रीति-रूप राग उत्पन्न करने का प्रयास करता है, किन्तु आत्मा का ध्यान कर निर्मोही होने का उपाय करता नहीं है यह कितना आश्चर्य है ? नाशवन्त वस्तु के लिए तो देखभाल करता है, किन्तु शाश्वत वस्तु के लिए किञ्चित् मात्र प्रयास करता नहीं है। जिस समय शरीर म व्याधि होती है अथवा मरण होता है, उस समय माता, पिता मित्र, पुत्र, पुत्री, भगनी, भाई, पत्नी, सगा सम्बन्धी कोई सहायक होता नहीं है, फिर भी मूढ (मूर्ख) जीव अपना मान कर सारा जीवन आकुलता रूप आग म फँसता है, किन्तु अपने हित के लिए किञ्चित् मात्र भी विचार करता नहीं है, यह कितना आश्चर्य है ? अपने बडप्पन दिखाने का और अपनी बात सब कोई स्वीकार कर ले, ऐसी भावना रूप विचार नहीं करना, किन्तु सदा सत्य मधु प्रेमपूर्वक शब्दों का उच्चारण करना चाहिए। किसी के दिल को आघात करनेवाले शब्दों का उच्चारण मत करो।

जिह्वा इन्द्रिय पर काबू करो, अनावश्यक मत बोलो, बहो तो हितकर मिठा भलाइ रूप बोलो, किसी का जहा तक हो भला करो, किन्तु अहित करने का विचार कदापि मत करो, उनसे मन अशुद्ध होता है और उनका संस्कार बहुत काल तक छूटता नहीं है। जो तुम आकाश पर थूकोगे तो वह थूक तुम्हारे सिर पर ही पडेगा, जो कीचड मे पत्थर फेंकोगे तो कीचड तुम्हारे मुह पर उछल कर गिरेगा, हवा में धूल फैंकने से तुम्हारी आँख मे गिरेगा, जो कोई दूसरे को तकलीफ देना चाहता है, वह अपने सिर पर आफत उठाता है, जो दूसरे को

नुकसान करने की भावना करना है, वह जीव खुद का ही नुकसान करता है जो कोई दूसरे की झूठी अफवाह उड़ाता है, वह अपना ही बुरा कर रहा है। कहावत भी है—"भला करेगा भला पायेगा" "बुरा करेगा बुरा पायेगा", इसलिये सदा अच्छा चिन्तवन, उसका मनन कायम रखना चाहिये कि जिससे आत्मा मे अच्छा संस्कार बन जाय और सदा बुरा निकल जाना ही आत्मा का श्रेयमार्ग है।

॥ ॐ शान्ति ॥

सुख शान्ति

वेद पुरान पढ़ नित पोथी, जिनवाणी अभ्यास करे।
कर माला शुभ तिलक लगा कर, परमब्रह्म का ध्यान धरे॥
रह कर दश दिवस गेह पर, या निर्जन वन बीच कहीं।
क्या जीवन सुख पाया तुमने, जो मन में है शान्ति नहीं॥
पण्डित पद धर ज्ञानि कहा कर, लोगों को उपदेश करे।
भीतर की माया नहीं त्यागी, ईर्षा से निज गेह भरे॥
करे सुधामय धनवानों की, लालच में आलाप सही।
जन्म वृथा नर पाया है, जो सन्तोषामृत पिया नहीं॥
सुन्दर सेज प्रासाद मान मद, फर्नीचर से गृह सजे।
धन जन भूषण मान प्रतिष्ठा, है सकल घर बाग वन॥
पुत्र मित्र दारा तन सुन्दर, त्रुटी नहीं है एक कहीं।
तो भी क्या जीवन सुख पाया, जो मनों में शान्ति नहीं॥

छोड चल सन्यास धरे, पर्वत की चोटी आन खडे।
गिरी गुफा जंगल मे रह कर, नग्न दिगम्बर रूप धरे॥
कोटि वर्ष तप कर साधना, दृढ चलाये दु ख सही।
क्या साधू पद पाकर पाया, जो मन म है शान्ति नहीं॥
बाहर से हम साधु कहाये, भीतर आग धधकती है।
आकुल व्याकुल परिणामों म, अग्नि तनिक नहीं घटती है॥
बाह्य क्रिया म धर्म मनाये, शान्ति कदापि आय नहीं।
व्यर्थ क्रिया समझो सबही, जो चित्त भावो म शान्ति नहीं॥
सुख दु ख म समता नहीं त्यागे, कभी नहीं घबरायेंगे।
किसी अवस्था मे रह कर भी, चिदानन्द को ध्यायेंगे॥
सब जीवो पर दया किसी का, दु ख कभी नहा दिये कदा।
जीवन धन्य उन्हीं पुरुषो का, जिनके मन म शान्ति सदा॥
तज इर्षा अभिमान क्रोध चुनि पर निन्दा से दूर रहो।
राग द्वेष है निज के वैरी, उनसे नाता छोड चलो॥
क्षमा शील सन्तोष और सुख, अ तर म है बाह्य नही।
पा सकता है ध्यान लगाले, अन्तर म सुख शान्ति रही॥

